नवरात्रि प्रवचन

परम पूज्य माताजी श्री निर्मला देवी

पुणे–1988

नवरात्रि प्रवचन

परम पूज्य माताजी श्री निर्मला देवी

पुणे—1988

वर्ष 1988 की नवरात्रि में परम पूज्य माताजी श्री निर्मला देवी द्वारा पुणे (प्रतिष्ठान) में दिए गए प्रवचनों का यह संकलन है। संकलन अपने आपमें अद्वितीय है। प्रायः ऐसा कभी नहीं हुआ कि लगातार नौ दिनों तक प्रतिदिन देवी की पूजा की गई हो। ऐसा केवल इस वर्ष में 11 से 19 अक्टूबर 1988 को ही हुआ। श्लोकों के अर्थ हिन्दी भाषा में दिए गए हैं।

सर्वाधिकार सुरक्षित

इस प्रकाशन का कोई भी अंश, प्रकाशक की अनुमति लिए बिना, किसी भी रूप में अथवा किसी भी जरिये से कहीं उद्धृत अथवा सम्प्रेषित न किया जाए। जो भी व्यक्ति इस प्रकाशन के संबंध में कोई भी अनधिकृत कार्य करेगा उसके विरुद्ध दंडात्मक अभियोजन तथा क्षतिपूर्ति के लिए दीवानी दावा दायर किया जा सकता है।

प्रकाशक :
निर्मल ट्रान्सफॉर्मेशन प्राइवेट लिमिटेड,
१०, भाग्यचिंतामणी सोसाइटी, पौड रोड,
कोथरूड, पुणे ४११ ०३८.
'ई' मेल : sale@nitl.co.in
वेबसाइट : www.nitl.co.in
प्रथम संस्करण – अक्टूबर 2002
द्वितीय संस्करण – मार्च 2005
तृतीय संस्करण – अक्टूबर 2007

विषय सूची	पृष्ठ सं०
प्रथमा (प्रतिपदा) नवरात्रि 11–10–1988	5
द्वितीया – नवरात्रि , 12–10–1988	6
तृतीया – नवरात्रि, 13–10–1988	15
चतुर्थी – नवरात्रि, 14–10–1988	35
पंचमी – नवरात्रि, 15–10–1988	43
षष्ठी – नवरात्रि, 16–10–1988	60
सप्तमी – नवरात्रि, 17–10–1988	82
अष्टमी – नवरात्रि, 18–10–1988	112
नवमी – नवरात्रि, 19–10–1988	126

"प्रथमा (प्रतिपदा) नवरात्रि अक्टूबर 11, 1988

नवरात्रि का प्रथम दिवस क्योंकि श्री गणेश का दिन है अतः इसे मौन दिवस के रूप में मनाया गया और श्री गणेश जी की पूजा की गई।

द्वितीया– नवरात्रि, 12–10–1988

देवी सूक्तम् पाठ किया गया।

देवी सूक्तम् :–

नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सततं नमः।

नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणताः स्म ताम्।। 1।।

देवी को नमस्कार है, महादेवी शिवा को सर्वदा नमस्कार है। प्रकृति एवं भद्रा को प्रणाम है। हम लोग नियमपूर्वक जगदम्बा को नमस्कार करते हैं।। 1।।

रौद्रायै नमो नित्यायै गौर्यै धात्र्यै नमो नमः।

ज्योत्स्नायै चेन्दुरूपिण्यै सुखायै सततं नमः।। 2।।

रौद्रा को नमस्कार है। नित्या, गौरी एवं धात्री को बारम्बार नमस्कार है। चन्द्ररूपिणी एवं सुखस्वरूपा देवी को सतत प्रणाम है।। 2।।

कल्याण्यै प्रणतां वृद्धयै सिद्धयै कुर्मो नमो नमः।

नैर्ऋत्यै भूभृतां लक्ष्म्यै शर्वाण्यै ते नमो नमः ।। 3।।

शरणागतों का कल्याण करने वाली वृद्धि एवं सिद्धिरूपा देवी को हम बारम्बार नमस्कार करते हैं। नैर्ऋती (राक्षसों की लक्ष्मी), राजाओं की लक्ष्मी तथा शर्वाणी (शिवपत्नी) स्वरूपा आप जगदम्बा को बारम्बार नमस्कार है।। 3।।

दुर्गायै दुर्गपारायै सारायै सर्वकारिण्यै।

ख्यात्यै तथैव कृष्णायै धूम्रायै सततं नमः ।। 4।।

दुर्गा, दुर्गपारा (दुर्गम संकट से पार उतारने वाली), सारा (सबकी सारभूता), सर्वकारिणी,ख्याति, कृष्णा और धूम्रादेवी को सर्वदा नमस्कार है।। 4।।

अतिसौम्यातिरौद्रायै नतास्तस्यै नमो नमः।

नमो जगत्प्रतिष्ठायै दैव्यै कृत्यै नमो नमः ।। 5।।

अत्यन्त सौम्य तथा अत्यन्त रौद्ररूपा देवी को हम नमस्कार करते हैं, उन्हें हमारा बारम्बार प्रणाम है। जगत् की आधारभूता कृति देवी को बारम्बार नमस्कार है।। 5 ।।

या देवी सर्वभूतेषु विष्णुमायेति शब्दिता।

नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ।। 6।।

जो देवी सब प्राणियों में विष्णुमाया के नाम से जानी जाती है उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारम्बार नमस्कार ।। 6।।

या देवी सर्वभूतेषु चेतनेत्यभिधीयते।

नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ।। 7।।

जो देवी सब प्राणियों में चेतना फैलाती है उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारम्बार नमस्कार ।। 7।।

या देवी सर्व भूतेषु बुद्धि रूपेण संस्थिता। नमस्तस्यै ..... ।। 8।।

जो देवी सब प्राणियों में बुद्धिरूप से स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारम्बार नमस्कार है।। 8।।

या देवी सर्वभूतेषु निद्रा रूपेण संस्थिता। नमस्तस्यै .... ।। 9।।

जो देवी सब प्राणियों में निद्रारूप से स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारम्बार नमस्कार है ।। 9।।

या देवी सर्व भूतेषु क्षुधा रूपेण संस्थिता। नमस्तस्यै .... ।। 10।।

जो देवी सब प्राणियों में क्षुधारूप से स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारम्बार नमस्कार है ।। 10।।

या देवी सर्व भूतेषु छाया रूपेण संस्थिता। नमस्तस्यै .... ।। 11।।

जो देवी सब प्राणियों में छायारूप से स्थित है, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारम्बार नमस्कार है ।। 11।।

या देवी सर्व भूतेषु शक्ति रूपेण संस्थिता। नमस्तस्यै ...।। 12।।

जो देवी सब प्राणियों में शक्तिरूप से स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारम्बार नमस्कार है ।। 12।।

या देवी सर्वभूतेषु तृष्णा रूपेण संस्थिता। नमस्तस्यै .....।। 13।।

जो देवी सब प्राणियों में तृष्णारूप से स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारम्बार नमस्कार है ।। 13।।

या देवी सर्व भूतेषु क्षान्ति (क्षमा) रूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै ..... ।। 14 ।।

जो देवी सब प्राणियों में क्षान्ति (क्षमा) रूप से स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारम्बार नमस्कार है ।। 14।।

या देवी सर्व भूतेषु जाति रूपेण संस्थिता। नमस्तस्यै ..... ।। 15 ।।

जो देवी सब प्राणियों में जातिरूप से स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारम्बार नमस्कार है ।। 15।।

या देवी सर्व भूतेषु लज्जा रूपेण संस्थिता। नमस्तस्यै ... ।। 16।।

जो देवी सब प्राणियों में लज्जारूप से स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारम्बार नमस्कार है ।। 16 ।।

या देवी सर्व भूतेषु शान्ति रूपेण संस्थिता। नमस्तस्यै ..... ।। 17 ।।

जो देवी सब प्राणियों में शान्तिरूप से स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारम्बार नमस्कार है ।। 17 ।।

या देवी सर्वभूतेषु श्रद्धा रूपेण संस्थिता। नमस्तस्यै .... ।। 18 ।।

जो देवी सब प्राणियों में श्रद्धारूप से स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारम्बार नमस्कार है ।। 18 ।।

या देवी सर्व भूतेषु कान्ति रूपेण संस्थिता। नमस्तस्यै .... ।। 19।।

जो देवी सब प्राणियों में कान्तिरूप से स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारम्बार नमस्कार है ।। 19 ।।

या देवी सर्व भूतेषु लक्ष्मी रूपेण संस्थिता। नमस्तस्यै ....।। 20 ।।

जो देवी सब प्राणियों में लक्ष्मीरूप से स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारम्बार नमस्कार है ।। 20।।

या देवी सर्व भूतेषु वृत्ति रूपेण संस्थिता। नमस्तस्यै ..... ।। 21 ।।

जो देवी सब प्राणियों में वृत्तिरूप से स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारम्बार नमस्कार है ।। 21 ।।

या देवी सर्व भूतेषु स्मृति रूपेण संस्थिता। नमस्तस्यै .... ।। 22 ।।

जो देवी सब प्राणियों मे स्मृतिरूप से स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारम्बार नमस्कार है ।। 22 ।।

या देवी सर्व भूतेषु दया रूपेण संस्थिता। नमस्तस्यै ।। 23 ।।

जो देवी सब प्राणियों में दयारूप से स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारम्बार नमस्कार है ।। 23 ।।

या देवी सर्व भूतेषु तुष्टि रूपेण संस्थिता। नमस्तस्यै ..... ।। 24 ।।

जो देवी सब प्राणियों में तुष्टिरूप से स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारम्बार नमस्कार है ।। 24 ।।

या देवी सर्व भूतेषु मातृ रूपेण संस्थिता। नमस्तस्यै .... ।। 25 ।।

जो देवी सब प्राणियों में मातारूप से स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारम्बार नमस्कार है ।। 25 ।।

या देवी सर्व भूतेषु भ्रान्ति रूपेण संस्थिता। नमस्तस्यै .... ।। 26 ।।

जो देवी सब प्राणियों में भ्रान्तिरूप से स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारम्बार नमस्कार है ।। 26 ।।

इन्द्रियाणामधिष्ठात्री भूतानां चाखिलेषु या ।

भूतेषु सततं तस्यै व्याप्तिदेव्यै नमो नमः।। 27 ।।

जो जीवों के इन्द्रिय वर्ग की अधिष्ठात्री देवी एवं सब प्राणियों में सदा व्याप्त रहने वाली हैं उन व्याप्ति देवी को बारम्बार नमस्कार है ।। 27 ।।

चितिरूपेण या कृत्स्नमेतद् व्याप्य संस्थिता जगत्।

नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः।। 28 ।।

जो देवी चैतन्य रूप से इस सम्पूर्ण जगत को व्याप्त करके स्थित हैं उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारम्बार नमस्कार ।। 28।।

अथ देव्याः कवचम्

देवी कवच

स्नेहमयी, करुणामयी, परम पूज्य माताजी श्री निर्मला देवी से प्रार्थना करते हुए।

श्री चण्डी कवच

श्री गणेश देव को प्रणाम, श्री सरस्वती को प्रणाम, श्री गुरु को प्रणाम, कुल–देवता को प्रणाम, कृपा करके सभी विध्न–बाधाओं का निवारण करें।

श्री नारायण को प्रणाम, श्री नर नरोत्तम (श्री विष्णु) को प्रणाम, देवी सरस्वती को प्रणाम, सर्वज्ञ श्री वेद–व्यास को प्रणाम।

तृतीया एवं चतुर्थी, नवरात्रि, 13/14–10–1988

अथ देव्याः कवचम्

देवी कवच

ॐ अस्य श्री चण्डी कवचस्य ब्रह्माऋषिः अनुष्टुप् छन्दः, चामुण्डा देवता, अंगन्यासोक्तमातरो बीजम्, दिग्बन्धदेवतास्तत्त्वम्, श्री जगदम्बाप्रीत्यर्थे सप्तशती–पाठांगत्वेन जपे विनियोगः।

श्री चण्डीकवच के अधिशासी देव ब्रह्मा हैं, अनुष्टुप छन्द–चामुण्डा इसकी देवी हैं, अंगन्यासोक्तमातरो इसका बीज है और दिग्बन्ध देवता इसका तत्त्व है। श्री जगदम्बा को प्रसन्न करने के लिए सप्तशती के एक भाग के रूप में इसका जप किया जाता है।

ॐ नमश्चण्डिकायै।।

श्री चण्डिका देवी को नमस्कार है।

मार्कण्डेय उवाच

मार्कण्डेय जी ने कहा –

ॐ यद्गुह्यं परमं लोके सर्वरक्षाकरं नृणाम्।

यन्न कस्यचिदाख्यातं तन्मे ब्रूहि पितामह ।। 1।।

पितामह (ब्रह्मदेव)! जो इस संसार में परमगोपनीय तथा मनुष्यों की सब प्रकार से रक्षा करने वाला है और जो अब तक आपने दूसरे किसी के सामने प्रकट नहीं किया हो, ऐसा कोई साधन मुझे बताइए।। 1।।

ब्रह्मोवाच

अस्ति गुह्यतमं विप्र सर्व भूतोपकारकम्।

देव्यास्तु कवचं पुण्यं तच्छृणुष्व महामुने ।। 2।।

ब्रह्माजी बोले–ब्रह्मन्! ऐसा साधन तो देवी का एक कवच ही है,जो गोपनीय से भी परम गोपनीय,पवित्र तथा सम्पूर्ण प्राणियों का उपकार करने वाला है। महामुने! उसे श्रवण करो ।। 2 ।।

प्रथमं शैलपुत्री च द्वितीयं ब्रह्मचारिणी।

तृतीयं चन्द्रघण्टेति कूष्माण्डेति चतुर्थकम्।। 3।।

पचमं स्कन्दमातेति षष्ठं कात्यायनीति च।

सप्तमं कालरात्रीति महागौरीति चाष्टमम् ।। 4।।

नवमं सिद्धिदात्री च नवदुर्गाः प्रकीर्तिताः।

उत्कान्येतानि नामानि ब्रह्मणैव महात्मना।। 5।।

(देवी के नौ स्वरूप हैं, जिन्हें 'नवदुर्गा' कहते हैं। उनके पृथक–पृथक नाम बतलाए जाते हैं। ऐसा ब्रह्मदेव ने कहा)

प्रथम नाम शैलपुत्री है। दूसरे स्वरूप का नाम 'ब्रह्मचारिणी' है। तीसरा स्वरूप 'चन्द्रघण्टा' के नाम से प्रसिद्ध है। चौथी मूर्ति को 'कूष्मण्डा' कहते हैं। पाँचवी दुर्गा का नाम 'स्कन्दमाता' है। देवी के छठे रूप को 'कात्यायनी' कहते हैं। सातवाँ कालरात्रि और आठवाँ स्वरूप 'महागौरी' के नाम से प्रसिद्ध है। नवीं दुर्गा का नाम सिद्धिदात्री है। ये सब नाम सर्वज्ञ महात्मा वेद भगवान के द्वारा ही प्रतिपादित हुए हैं।। 3–5 ।।

अग्निना दह्यमानस्तु शत्रुमध्ये गतो रणे।
विषमे दुर्गमे चैव भयार्ताः शरणं गताः।। 6।।
न तेषां जायते किंचिदशुभं रणसंकटे।
नापदं तस्य पश्यामि शोकदुःखभयं न हि ।। 7।।

जो मनुष्य अग्नि में जल रहा हो, रणभूमि में शत्रुओं से घिर गया हो, विषम संकट में फँस गया हो तथा इस प्रकार भय से आतुर होकर जो भगवती दुर्गा की शरण में प्राप्त हुए हों, उनका कभी कोई अमंगल नहीं होता। युद्ध के समय संकट में पड़ने पर भी उनके ऊपर कोई विपत्ति दिखाई नहीं देती। उन्हें शोक, दुःख और भय की प्राप्ति नहीं होती।। 6–7।।

यैस्तु भक्त्या स्मृता नूनं तेषां वृद्धिः प्रजायते।
ये त्वां स्मरन्ति देवेशि रक्षसे तान्न संशयः ।। 8।।

जिन्होंने भक्तिपूर्वक देवी का स्मरण किया है, उनका निश्चय ही अभ्युदय होता है। देवेश्वरि! जो आपका चिन्तन करते हैं, उनकी आप निःसंदेह रक्षा करती हो।। 8।।

प्रेतसंस्था तु चामुण्डा वाराही महिषासना।

ऐन्द्री गजसमारूढ़ा वैष्णवी गरुड़ासना ।। 9।।

चामुण्डा देवी प्रेत पर आरूढ़ होती हैं। 'बाराही' भैंसे पर सवारी करती हैं। ऐन्द्री का वाहन ऐरावत हाथी है। वैष्णवी देवी गरुड़ पर ही आसन जमाती हैं।। 9।।

माहेश्वरी वृषारूढ़ा कौमारी शिखिवाहना।

लक्ष्मीः पद्मासना देवी पद्महस्ता हरिप्रिया।। 10 ।।

माहेश्वरी वृषभ पर आरूढ़ होती है। कौमारी का वाहन मयूर है। भगवान विष्णु की प्रियतमा लक्ष्मी देवी कमल के आसन पर विराजमान हैं और हाथों में कमल धारण किए हुए हैं।। 10 ।।

श्वेतरूपधरा देवी ईश्वरी वृषवाहना।

ब्राह्मी हंससमारूढ़ा सर्वाभरणभूषिता ।। 11 ।।

वृषभ पर आरूढ़ ईश्वरी देवी ने श्वेत रूप धारण कर रखा है। ब्राह्मी देवी हंस पर बैठी हुई हैं और सब प्रकार के आभूषणों से विभूषित हैं।। 11।।

इत्येता मातरः सर्वाः सर्वयोगसमन्विताः।

नानाभरणशोभाढ्या नानारत्नोपशोभिताः।। 12 ।।

इस प्रकार ये सभी मातायें सब प्रकार की योगशक्तियों से सम्पन्न हैं। इनके सिवा और भी बहुत सी देवियाँ हैं, जो अनेक प्रकार के आभूषणों की शोभा से युक्त तथा नाना प्रकार के रत्नों से सुशोभित हैं।। 12।।

दृश्यन्ते रथमारूढ़ा देव्यः क्रोधसमाकुलाः।

शंखं चक्रं गदां शक्तिं हलं च मुसलायुधम्।। 13 ।।

खेटकं तोमरं चैव परशुं पाशमेव च।

कुन्तायुधं त्रिशूलं च शार्ङ्गयुधमुत्तमम् ।। 14 ।।

दैत्यानां देहनाशाय भक्तानामभयाय च।

धारयन्त्यायुधानीत्थं देवानां च हिताय वै ।। 15।।

ये सम्पूर्ण देवियाँ क्रोध में भरी हुई हैं और भक्तों की रक्षा के लिए रथ पर बैठी दिखायी देती हैं। शंख, चक्र, गदा, शक्ति, हल और मुसल, खेटक और तोमर, परशु तथा पाश कुन्त और त्रिशूल एवं उत्तम शार्गंधनुष आदि अस्त्र–शस्त्र अपने हाथों में

धारण करती हैं। दैत्यों के शरीर का नाश करना, भक्तों को अभयदान देना और देवताओं का कल्याण करना – यही उनके शस्त्र धारण का उद्देश्य है।। 13–15।।

नमस्तेऽस्तु महारौद्रे महाघोरपराक्रमे।
महाबले महोत्साहे महाभयविनाशिनि।। 16।।

[कवच आरम्भ करने के पहले इस प्रकार प्रार्थना करनी चाहिए] महान रौद्ररूप, अत्यन्त घोर पराक्रम, महान बल और महान उत्साह वाली देवी!आप महानभय का नाश करने वाली हो, आपको नमस्कार है ।। 16 ।।

त्राहि मां देवि दुष्प्रेक्ष्ये शत्रूणां भयवर्द्धिनी।
प्राच्यां रक्षतु मामैन्द्री आग्नेय्यामग्निदेवता ।। 17 ।।
दक्षिणेऽवतु वाराही नैर्ऋत्यां खड्गधारिणी।
प्रतीच्यां वारुणी रक्षेद् वायव्यां मृगवाहिनी ।। 18 ।।

आपकी ओर देखना भी कठिन है। शत्रुओं का भय बढ़ाने वाली जगदम्बिके! मेरी रक्षा करें। पूर्व दिशा में ऐन्द्री (इन्द्रशक्ति) मेरी रक्षा करें। अग्निकोण में अग्निशक्ति, दक्षिण दिशा में वाराही तथा नैर्ऋत्यकोण में खड़गधारिणी मेरी रक्षा करें। पश्चिम दिशा में वारुणी और वायव्यकोण में मृग पर सवारी करने वाली देवी मेरी रक्षा करें।। 17–18।।

उदीच्यां पातु कौमारी ऐशान्यां शूलधारिणी।

ऊर्ध्वं ब्रह्माणि मे रक्षेदधस्ताद् वैष्णवी तथा ।। 19।।

उत्तर दिशा में कौमारी और ईशान–कोण में शूल धारिणी देवी रक्षा करें। ब्रह्माणि! आप ऊपर की ओर से मेरी रक्षा करें और वैष्णवी देवी नीचे की ओर से मेरी रक्षा करें ।। 19।।

एवं दश दिशो रक्षेच्चामुण्डा शववाहना।

जया मे चाग्रतः पातु विजया पातु पृष्ठतः ।। 20।।

इसी प्रकार शव को वाहन बनानेवाली चामुण्डा देवी दसों दिशाओं में मेरी रक्षा करें। जया आगे से और विजया पीछे की और से मेरी रक्षा करें ।। 20।।

अजिता वामपार्श्वे तु दक्षिणे चापराजिता।

शिखामुद्योतिनी रक्षेदुमा मूर्ध्नि व्यवस्थिता ।। 21।।

वाम भाग में अजिता और दक्षिण भाग में अपराजिता रक्षा करें। उद्योतिनी शिखा की रक्षा करें। उमा मेरे मस्तक पर विराजमान होकर रक्षा करें ।। 21।।

मालाधरी ललाटे च भ्रुवौ रक्षेद् यशस्विनी।

त्रिनेत्रा च भ्रुवोरेर्मध्ये यमघण्टा च नासिके ।। 22।।

ललाट में मालाधरी रक्षा करें और यशस्विनी देवी मेरी भौंहों का संरक्षण करें। भौंहों के मध्यभाग में त्रिनेतत्रा और नथुनों की यमघण्टा देवी रक्षा करें।। 22।।

शंखिनी चक्षुषोर्मध्ये श्रोत्रयोर्द्वारवासिनी।

कपोलौ कालिका रक्षेत्कर्णमूले तु शांकरी ।। 23।।

दोनों नेत्रों के मध्य भाग में शंखिनी और कानों में द्वारवासिनी रक्षा करें। कालिका देवी कपोलों की तथा भगवती शांकरी कानों के मूल भाग की रक्षा करें ।। 23।।

नासिकायां सुगन्धा च उत्तरोष्ठे च चर्चिका।

अधरे चामृतकला जिह्वायां च सरस्वती ।। 24 ।।

नासिका में सुगन्धा और ऊपर के होंठ में चर्चिका देवी रक्षा करें। नीचे के होंठ में अमृतकला तथा जिह्वा में सरस्वती रक्षा करें ।। 24।।

दन्तान् रक्षतु कौमारी कण्ठदेशे तु चण्डिका ।

घण्टिकां चित्रघण्टा च महामाया च तालुके ।। 25 ।।

कौमारी दाँतों की और चण्डिका कण्ठप्रदेश की रक्षा करें। चित्रघण्टा गले की घाँटी की और महामाया तालू में रहकर रक्षा करें।। 25 ।।

कामाक्षी चिबुकं रक्षेद् वाचं मे सर्वमंगला।

ग्रीवायां भद्रकाली च पृष्ठवंशे धनुर्धरी ।। 26।।

कामाक्षी ठोढ़ी की और सर्वमंगला मेरी वाणी की रक्षा करें। भद्रकाली ग्रीवा और धनुर्धरी पृष्ठवंश (मेरूदण्ड) में रहकर रक्षा करें।। 26।।

नीलग्रीवा बहिःकण्ठे नलिकां नलकूबरी।

स्कन्धयोः खंगिनी रक्षेद् बाहू मे वज्रधारिणी ।। 27 ।।

कण्ठ के बाहरी भाग में नीलग्रीवा और कण्ठ की नली में नलकूबरी रक्षा करें। दोनों कन्धों में खंगिनी और मेरी दोनों भुजाओं की वज्रधारिणी रक्षा करें।। 27।।

हस्तयोर्दण्डिनी रक्षेदम्बिका चांगुलीषु च।

नखाच्छूलेश्वरी रक्षेत्कुक्षौ रक्षेत्कुलेश्वरी।। 28 ।।

दोनों हाथों में दण्डिनी और अंगुलियों में अम्बिका रक्षा करें। शूलेश्वरी नखों की रक्षा करें। कुलेश्वरी कुक्षि (पेट) में रहकर रक्षा करें।। 28।।

स्तनौ रक्षेन्महादेवी मनःशोकविनाशिनी।

हृदये ललिता देवी उदरे शूलधारिणी।। 29।।

महादेवी दोनों स्तनों की और शोकविनाशिनी देवी मन की रक्षा करें। ललिता देवी हृदय में, शूलधारिणी उदर में रहकर रक्षा करें।। 29।।

नाभौ च कामिनी रक्षेद् गुह्यं गुह्येश्वरी तथा।

पूतना कामिका मेढ्रं गुदे महिषवाहिनी।। 30।।

नाभी में कामिनी और गुह्यभाग की गुह्येश्वरी रक्षा करें। पूतना और कामिका लिंग की और महिषवाहिनी गुदा की रक्षा करें।। 30।।

कट्यां भगवती रक्षेज्जानुनी विंध्यवासिनी।

जंघे महाबला रक्षेत्सर्वकामप्रदायिनी ।। 31 ।।

भगवती कटि भाग में और विन्ध्यवासिनी घुटनों की रक्षा करें। सम्पूर्ण कामनाओं को देनेवाली महाबला देवी दोनों पिण्डलियों की रक्षा करें।। 31 ।।

गुल्फयोर्नारसिंही च पादपृष्ठे तु तैजसी।

पादांगुलीषु श्री रक्षेत्पादाधस्तलवासिनी।। 32 ।।

नारसिंही दोनों घुट्टियों की और तैजसी देवी दोनों चरणों के पृष्ठभाग की रक्षा करें। श्री देवी पैरों की अंगुलियों में और तलवासिनी तलुओं में रहकर रक्षा करें।। 32 ।।

नखान् दंष्ट्राकराली च केशांश्चैवोर्ध्वकेशिनी।

रोमकूपेषू कौमारी त्वचं वागीश्वरी तथा ।। 33 ।।

अपनी दाढ़ों के कारण भयंकर दिखायी देने वाली दंष्ट्राकराली देवी नखों की, ऊर्ध्वकेशिनी देवी केशों की रक्षा करें। रोमावलियों के छिद्रों में कौमारी और त्वचा की बागीश्वरी देवी रक्षा करें ।। 33।।

रक्तमज्जावसामांसान्यस्थिमेदांसि पार्वती।

अन्त्राणि कालरात्रिश्च पित्तं च मुकुटेश्वरी ।। 34 ।।

पार्वती देवी रक्त, मज्जा, वसा मांस, हड्डी, और मेद की रक्षा करें। आँतों की कालरात्रि और पित्त की मुकुटेश्वरी रक्षा करें।। 34 ।।

पद्मावती पद्मकोशे कफे चूड़ामणिस्तथा।

ज्वालामुखी नखज्वालामभेद्या सर्वसन्धिषु ।। 35 ।।

सभी चक्रों में पद्मावती देवी और कफ (या फेफड़ों) में चूड़ामणि देवी स्थित होकर रक्षा करें। नख के तेज की ज्वालामुखी रक्षा करें। जिसका किसी भी अस्त्र से भेदन नहीं हो सकता, वह अभेद्या देवी शरीर की समस्त सन्धियों में रहकर रक्षा करें।। 35 ।।

शुक्रं ब्रह्माणि मे रक्षेच्छायां छत्रेश्वरी तथा।

अहंकारं मनो बुद्धिं रक्षेन्मे धर्मधारिणी ।। 36।।

ब्रह्माणि आप मेरे वीर्य की रक्षा करें। छत्रेश्वरी छाया की तथा धर्मधरिणी देवी मेरे अहंकार, मन और बुद्धि की रक्षा करें।। 36 ।।

प्राणापानौ तथा व्यानमुदानं च समानकम्।

वज्रहस्ता च मे रक्षेत्प्राणं कल्याणशोभना ।। 37।।

हाथ में वज्रधारण करने वाली वज्रहस्ता देवी मेरे प्राण, अपान, व्यान, उदान और समान वायु की रक्षा करें। कल्याण से शोभित होने वाली भगवती कल्याणशोभना मेरे प्राण की रक्षा करें।। 37 ।।

रसे रूपे च गन्धे च शब्दे स्पर्शे च योगिनी।

सत्त्वं रजस्तमश्चैव रक्षेन्नारायणी सदा ।। 38 ।।

रस, रूप, गन्ध, शब्द और स्पर्श–इन विषयों का अनुभव करते समय योगिनी देवी रक्षा करें तथा सत्वगुण, रजोगुण और तमोगुण की रक्षा सदा नारायणी देवी करें।। 38।।

आयू रक्षतु वाराही धर्म रक्षतु वैष्णवी।

यशः कीर्ति च लक्ष्मीं च धनं विद्यां च चक्रिणी ।। 39।।

वाराही आयु की रक्षा करें। वैष्णवी धर्म की रक्षा करें तथा चक्रिणी (चक्र धारण करने वाली) देवी यश, कीर्ति, लक्ष्मी, धन तथा विद्या की रक्षा करें।। 39।।

गोत्रमिन्द्राणि मे रक्षेत्पशून्मे रक्ष चण्डिके।

पुत्रान् रक्षेन्महालक्ष्मीर्भार्यां रक्षतु भैरवी।। 40 ।।

इन्द्राणि! आप मेरे गोत्र की रक्षा करें। चण्डिके! मेरे पशुओं की रक्षा करें। महालक्ष्मी पुत्रों की रक्षा करें और भैरवी पत्नी की रक्षा करें।। 40।।

पन्थानं सुपथा रक्षेन्मार्गं क्षेमकरी तथा।

राजद्वारे महालक्ष्मीर्विजया सर्वतः स्थिता।। 41 ।।

मेरे पथ की सुपथा तथा मार्ग की क्षेमकरी रक्षा करें। राजा के दरबार में महालक्ष्मी रक्षा करें तथा सब ओर व्याप्त रहने वाली विजया देवी सम्पूर्ण भयों से मेरी रक्षा करें ।। 41।।

रक्षाहीनं तु यत्स्थानं वर्जितं कवचेन तु।

तत्सर्वं रक्ष मे देवी जयन्ति पापनाशिनी ।। 42।।

देवी! जो स्थान कवच में नहीं कहा गया है, अतएवं रक्षा से रहित है, वह सब आप द्वारा सुरक्षित हो, क्योंकि आप विजयशालिनी और पापनाशिनी हो ।। 42।।

पदमेकं न गच्छेत्तु यदीच्छेच्छुभमात्मनः।

कवचेनावृतो नित्यं यत्र यत्रेव गच्छति।। 43।।

तत्र तत्रार्थलाभश्च विजयः सार्वकामिकः

यं यं चिन्तयते कामं तं तं प्राप्नोति निश्चितम्।

परमैश्वर्यमतुलं प्राप्स्यते भूतले पुमान्।। 44।।

यदि अपने शरीर का भला चाहे तो मनुष्य बिना कवच के कहीं एक पग भी न जाए–कवच का पाठ करके ही यात्रा करे। कवच के द्वारा सब ओर से सुरक्षित मनुष्य जहाँ–जहाँ भी जाता है, वहाँ–वहाँ उसे धन लाभ होता है तथा सम्पूर्ण कामनाओं की सिद्धि करने वाली विजय की प्राप्ति होती है। वह जिस–जिस अभीष्ट वस्तु का चिन्तन करता है, उस–उस को निश्चय ही प्राप्त कर लेता है। वह पुरुष उस पृथ्वी पर तुलनारहित महानऐश्वर्य का भागी होता है।। 43–44।।

निर्भयो जायते मर्त्यः संग्रामेष्वपराजितः।

त्रैलोक्ये तु भवेत्पूज्यः कवचेनावृतः पुमान्।। 45 ।।

कवच से सुरक्षित मनुष्य निर्भय हो जाता है। युद्ध में उसकी पराजय नहीं होती तथा वह तीनों लोकों में पूजनीय होता है ।। 45 ।।

इदं तु देव्याः कवचं देवानामपि दुर्लभम्।

यः पठेत्प्रयतो नित्यं त्रिसन्ध्यं श्रद्धयान्वितः।। 46।।

दैवी कला भवेत्तस्य त्रैलोक्येष्वपराजितः।

जीवेद् वर्षशतं साग्रमपमृत्यु विवर्जितः।। 47।।

देवी का ये कवच देवताओं के लिए भी दुर्लभ है। जो प्रतिदिन नियमपूर्वक तीनों सन्ध्याओं के समय श्रद्धा के साथ इसका पाठ करता है, उसे दैवी कला प्राप्त होती है तथा वह तीनों लोकों में कहीं भी पराजित नहीं होता। इतना ही नहीं वह अपमृत्यु (अकाल–मृत्यु) रहित हो सौ से भी अधिक वर्षों तक जीवित रहता है।। 46–47।।

नश्यन्ति व्याधयः सर्वे लूताविस्फोटकादयः।

स्थावरं जंगमं चैव कृत्रिमं चापि यद्विषम्।। 48।।

मकरी, चेचक और कोढ़ आदि उसकी सम्पूर्ण व्याधियाँ नष्ट हो जाती हैं। कनेर, भाँग, अफ़ीम, धतूरे आदि का स्थावर विष, साँप और बिच्छू आदि के काटने से चढ़ा हुआ जंगमं विष तथा अहिफेन और तेल के संयोग आदि से बनने वाला कृत्रिम विष – ये सभी प्रकार के विष दूर हो जाते हैं, उनका कोई असर नहीं होता।। 48।।

अभिचाराणि सर्वाणि मन्त्रयन्त्राणि भूतले।

भूचराः खेचराश्चैव जलजाश्चोपदेशिकाः।। 49।।

सहजा कुलजा माला डाकिनी शाकिनी तथा।

अन्तरिक्षचरा घोरा डाकिन्यश्च महाबलाः।। 50।।

ग्रहभूतपिशाचाश्च यक्षगन्धर्वराक्षसाः।

ब्रह्मराक्षसवेतालाः कूष्माण्डा भैरवादयः।। 51।।

नश्यन्ति दर्शनात्तस्य कवचे हृदि संस्थिते।

मानोन्नतिर्भवेद् राज्ञस्तेजोवृद्धिकरं परम्।। 52।।

इस पृथ्वी पर मारण–मोहन आदि जितने आभिचारिक प्रयोग होते हैं तथा इस प्रकार के जितने मन्त्र, यन्त्र होते हैं, वे सब इस कवच को हृदय में धारण कर लेने पर मनुष्य को देखते ही नष्ट हो जाते हैं। ये ही नहीं पृथ्वी पर विचरने वाले ग्रामदेवता, आकाशचारी, देवविशेष, जल के सम्बन्ध से प्रकट होने वाले गण, उपदेश मात्र से सिद्ध होने वाले निम्नकोटि के देवता, अपने जन्म के साथ प्रकट होने वाले देवता, कुलदेवता, माला (कण्ठमाला आदि), डाकिनी, शाकिनी, अंतरिक्ष में विचरने वाली अत्यन्त बलवती भयानक डाकिनियाँ, ग्रह, भूत, पिशाच, यक्ष, गन्धर्व,

राक्षस, ब्रह्मराक्षस, बेताल, कूष्माण्ड और भैरव आदि अनिष्टकारक देवता भी हृदय में कवच धारण किए रहने पर उस मनुष्य को देखते ही भाग जाते हैं। कवचधारी मनुष्य को राजा से सम्मान वृद्धि प्राप्त होती है। यह कवच मनुष्य के तेज की वृद्धि करने वाला और उत्तम है ।। 49–52।।

यशसा वर्द्धते सोऽपि कीर्तिमण्डितभूतले।

जपेत्सप्तशतीं चण्डीं कृत्वा तु कवचं पुरा ।। 53 ।।

यावद्भूमण्डलं धत्ते सशैलवनकाननम्।

तावत्तिष्ठति मेदिन्यां सन्ततिः पुत्रपौत्रिकी ।। 54 ।।

कवच का पाठ करने वाला मनुष्य अपनी कीर्ति से विभूषित भूतलपर अपने सुयश के साथ–साथ वृद्धि को प्राप्त होता है। जो पहले कवच का पाठ करके उसके बाद सप्तशती चण्डी का पाठ करता है, उसकी जब तक वन, पर्वत और काननों सहित यह पृथ्वी टिकी रहती है, तब तक यहाँ पुत्र–पौत्र आदि सन्तान परम्परा बनी रहती है।। 53–54।।

देहान्ते परमं स्थानं यत्सुरैरपि दुर्लभम्।

प्राप्नोति पुरुषो नित्यं महामायाप्रसादतः।। 55।।

फिर देह का अन्त होने पर वह मनुष्य भगवती महामाया के प्रसाद से उस नित्य परम पद को प्राप्त होता है, जो देवताओं के लिए भी दुर्लभ है ।। 55 ।।

लभते परमं रूपं शिवेन सह मोदते ।। ॐ। 56।।

वह सुन्दर दिव्य रूप धारण करता है और कल्याणमय शिव के साथ आनन्द का भागी होता है।। 56 ।।

इति देव्याः कवचं सम्पूर्णम्

"माँ के पास अपने बच्चों की रक्षा करने और देखभाल करने के लिए बहुत सी शक्तियाँ हैं। सर्वदा ये शक्तियाँ विद्यमान होती हैं और हर समय–चौबीसों घण्टे कार्यरत रहती हैं। अतः जो भी मनुष्य श्रीमाताजी के प्रति समर्पण करता है, इन शक्तियों की अभिव्यक्ति होती है और ये उसकी समस्याओं का समाधान करने में सहायक होती हैं, परन्तु समर्पण पहली चीज है। आप यदि परमात्मा के साम्राज्य में नहीं हैं तो, 'माँ' (श्रीमाताजी) की कोई जिम्मेदारी नहीं है। तब ऐसा भी हो सकता है कि कोई आसुरी (नकारात्मक) शक्ति आप पर नियंत्रण कर ले और आपको नष्ट कर दे।"

चतुर्थी – नवरात्रि, 14–10–1988

तृतीया को पढ़े देवी कवच का शेष भाग पढ़ा गया

श्री माताजी ने कहा –

तो अब हमने इस कवच को संक्षिप्त कर दिया है। आप मात्र 'बन्धन' ले लें और यह कवच सम ही है। आत्म–साक्षात्कारी लोगों का बन्धन ले लेना कवच सम ही होता है। जो भी कुछ आपने यहाँ कहा, सब कर दिया गया है। कल और आज यहाँ जो कुछ भी कहा गया, वे सारे रक्षा कार्य (रक्षाकरी) एक झटके में कर दिए गए हैं।

अब तो हमने देखना है कि हममें से कितने लोग घर से बाहर जाते हुए, सोने से पूर्व या कोई भी महत्वपूर्ण कार्य करने से पूर्व बन्धन लेते हैं। कितने लोग बन्धन लेते हैं ? शायद कभी आप इसे भूलते हों, यह बहुत महत्वपूर्ण है, यात्रा पर जाने से पूर्व, सड़क पर जाने से पूर्व आप यदि बन्धन ले लें तो बेहतर होगा। ये न कहें कि ठीक है, श्रीमाताजी हमारी रक्षा कर रही हैं। ये बात नहीं है। यह सब कार्य करने से पूर्व आपको बन्धन लेना आवश्यक है।

आपकी यदि दुर्घटना हो जाए तो आप समझ लें कि आपसे कोई अपराध हुआ है या कुछ और है। प्रायः आपकी दुर्घटना नहीं होनी चाहिए। दुर्घटना का अर्थ है कि आपमें अभी भी कुछ कमी है।

कवच के विषय में बताते हुए श्रीमाताजी पुनः कहती हैं :

"मार्कण्डेय ने बहुत समय पर्व जिस बात का वचन दिया था वह आपको अब प्राप्त हो गया है। उन्होंने चौदह हजार वर्ष पूर्व, वचन दिया था कि जब महामाया आयेंगी तो यह कार्य पूर्ण होगा। जब वे (श्रीमाताजी) इस कार्य को करेंगी तभी यह घटित होगा। हमें यह महसूस करना चाहिए कि हमें दिए गए सभी वचन अब पूर्ण हो रहे हैं। अब हमें कुछ वचन देने होंगे और कुछ प्रश्न पूछने होंगे। क्या हमने जीवन में अपना लक्ष्य प्राप्त कर लिया है या नहीं ? यह प्रश्न हमें पूछना चाहिए और छोटी–छोटी तुच्छ चीजों में नहीं फँसें रहना चाहिए। अपने लिए बहुत बड़ा स्वप्न देखना होगा।

भिन्न दृष्टिकोण तथा निर्लिप्त अवस्था – कल्पना करें कि सभी प्रकार की समस्याओं का कारण अपनी आन्तरिक उथल–पुथल है। आप की स्थिति पहिए के सिरे पर न होकर उसकी धुरी पर हैं, जैसे स्वयं को बन्धन देना। जब इसके विषय में लिखा गया था तब इसकी इतनी व्याखया नहीं की गई क्योंकि लोग सहजयोगी न थे।

सहजयोग के साथ एक समस्या है कि जिन लोगों ने न तो देवी की पूजा की थी, न ही कवच लिया हुआ था और न ही कुछ और किया हुआ था जो धार्मिक भी नहीं थे जिन्होंने कोई अन्य पूजा भी नहीं की थी, न तो नमाज

ही पढ़ी थी, न प्रार्थना की थी, जिन्होंने कुछ भी नहीं किया था, ऐसे लोगों भी सहजयोग में आ गये हैं। वे लोगे जो परमात्मा को मानते ही न थे वो भी सहजयोग में आ गए हैं। यहाँ पर सभी प्रकार के लोग हैं। जिन लोगों ने शुद्ध हृदय से यह सब किया है, केवल जुबानी जमाखर्च नहीं किया, उन्हें आत्म–साक्षात्कार मिल जाता है, और उन्हें बहुत अधिक पकड़ भी नहीं आती है। परन्तु जिन लोगों ने पहले ऐसा कुछ नहीं किया, उन लोगों के लिए ऐसा समझना आवश्यक है कि उन्हें पूर्णतः निर्लिप्त होना पड़ेगा। अतः होता क्या है कि ऐसे लोग धुरी तक जाकर बाहर आ जाते हैं। अतः कोई यदि देवी का भक्त है तो ये बात गलत है। आप बहुत शीघ्र पकड़ जाते हैं। परन्तु सहजयोग में हमने एक कार्य किया है, हमारे यहाँ इस प्रकार के ऐसे गुणों वाले बहुत कम लोग हैं। आज आप कह सकते हैं कि बहुत ही कम ऐसे लोग हैं, शायद ही कोई हो, अधिकतर लोग धुरी के दायरे पर चले गए हैं। तो सहजयोग में हम क्या करते हैं ? पहले हम एक शिखर बनाते हैं जिसके द्वारा आप वर्तमान में आ जाते हैं, उसके पश्चात् अपने भूतकाल को बनाते हैं। सबसे पहले शिखर है। यही कारण है कि आपको अपनी नीवें, अपने बन्धनों, अपनी सारी आदतें शुद्ध करते चले जाना है। मान लो कि मार्कण्डेय जैसा कोई व्यक्ति है तो कोई समस्या है ही नहीं। इसलिए आपको स्वयं को शुद्ध करते चले जाना है। इसके अतिरिक्त कोई उपाय नहीं। किस प्रकार इस बात की प्रतीक्षा की जाती कि लोग एक–एक करके अपने चक्रों को शुद्ध करेंगे और किस प्रकार उस अवस्था में लाकर उन्हें आत्म–साक्षात्कार देते। सर्वोत्तम बात तो यही थी कि पहले उन्हें आत्म–साक्षात्कार दे दिया जाए ताकि वो अपनी

देखभाल कर सकें और स्वयं को पहचानने लगें। यदि यही होता रहे कि मैं इस चक्र पर पकड़ रहा हूँ , मैं उस चक्र पर पकड़ रहा हूँ , तो आप स्वयं को शुद्ध करना आरम्भ कर देंगें। यह बात मेरे लिए भी बहुत आसान है और आपके लिए भी। तब आप निर्लिप्त होने लगते हैं। परन्तु कभी–कभी हम अन्य लोगों के कारण भी पकड़ जाते हैं। यह बात महत्वपूर्ण है।

जहाँ तक मेरा सम्बन्ध है मैंने अपने शरीर को अत्यन्त स्वतन्त्र कर लिया है। मैं अपनी रक्षा बिल्कुल भी नहीं करती। कोई भी सहजयोगी यदि मेरे पास आता है और उसे यदि कोई बाधा होती है तो मैं इस बाधा को सोख लेती हूँ और पकड़ को ठीक कर देती हूँ। निःसंदेह मुझे थोड़ा बहुत कष्ट उठाना पड़ता है कोई बात नहीं; क्योंकि मैं अपने कष्ट को भी साक्षी रूप से देखती हूँ। यह बहुत बड़ी समस्या नहीं है। हमें यही चीज देखनी है, यही चीज समझनी है और ऐसी अवस्था तक पहुँचना है जहाँ आप वायु दाब–मापी (Barometric) जैसे हो सकें। जब आपको बाध ा का पता चलने लगे तब आप समझ लें कि आप दाब मापी हो गए हैं। आप जान जाते हैं कि इस व्यक्ति के साथ ये बाधा है। एक तरह बाधा से ऐसे ही नहीं पकड़े जाते और उसका कष्ट उठाते, परन्तु आप पकड़ जाते हैं और जानबूझ कर कष्ट उठाते हैं और इस पकड़ को साफ करते हैं। परन्तु सहजयोग में आत्म–साक्षात्कार प्राप्त करने के पश्चात् भी व्यक्ति भूतकाल में फँस सकता है क्योंकि भूतकाल चाहे अहानिकर प्रतीत न हो, यह पूजा की तरह

से सुखद भी नहीं है।

मेरी पूजा करते हुए लोग भूल जाते हैं कि मैं वहाँ पर साक्षात हूँ। वो तो बस मेरी पूजा करते हैं। भजन गाते हुए भी आप मेरी स्तुति गाए चले जाते हैं। इस बात का अहसास आपमें नहीं होता कि मैं वहाँ आपके सम्मुख बैठी हुई हूँ। क्या ऐसा नहीं होता ? मेरी स्तुति आप केवल इसलिए गाते हैं कि यह केवल संगीत है। आपमें यह एहसास होना चाहिए कि आप मेरे सम्मुख बैठे हुए हैं और मेरी स्तुति गा रहे हैं। तो एक रूपता की पहचान होनी अभी शेष है कि आप देवी की स्तुति गा रहे हैं। देवी कौन है, यह पुल पार किया जाना अभी बाकी है ? मुझे देखकर मेरे माध्यम से आप यदि मेरी पहचान भेदन करें तो बेहतर होगा। मस्तिष्क पर इतनी भयंकर पकड़ है। धर्म स्वयं एक बहुत बड़ा बन्धन है। जैसे जैनी लोग सहजयोग के लिए बहुत कठिन हैं। वो यदि सहजयोग में आ जाएं तो भी अत्यन्त दुष्कर होते हैं क्योंकि उनके संस्कार बहुत गहन हैं। जैसे आर्य–समाजियों के बन्धन भी बहुत गहन होते हैं और 'बुद्ध–धर्मियों' के भी। वे निराकार में विश्वास रखते हैं पर परमात्मा को नहीं मानते। व्यक्ति को इस नजरिये से देखना चाहिए : "हम न बुद्ध को जानते हैं, न मोहम्मद को, हमने उन्हें नहीं देखा, हम महावीर को भी नहीं जानते, हम किसी को नहीं जानते।" " आपको आत्मसाक्षात्कार किसने दिया ? श्रीमाताजी ने।" अतः हमें यह बात समझनी चाहिए कि किसी को भी यदि हमने समझना है तो हमें श्रीमाताजी के माध्यम से समझना होगा, न कि सहजयोग

के। अब दूसरी विधि से यदि आप चलते हैं तो यह कार्यन्वित नहीं होता। यह भूतकाल में वापिस चाला जाता है। यही समस्या है। मस्तिष्क एक ओर से दूसरी ओर और दूसरी ओर से पहली ओर को विचलित होता रहता है। इसे स्थिर करें और समझें कि वर्तमान क्या है ? आपके सम्मुख कौन है। आपको आत्म–साक्षात्कार किसने दिया।

" एक दूसरी समस्या ये है कि मैं महामाया हूँ" केवल महामाया ही आपको आत्म–साक्षात्कार देंगी। यह बात शास्त्रों में लिखी हुई है, महामाया आपको साक्षात्कार देती हैं। परन्तु मैं इतनी मानवीय हूँ कि मैं अपने किए से पीछे हट सकती हूँ। आप मुझे समझ नहीं सकते। जब–जब भी आप वास्तविकता के समीप आने का प्रयत्न करते हैं आप महामाया के जाल में फँस जाते हैं। मैं इतनी अमानवीय हूँ। आपके लिए यही समस्या है, परन्तु यही समाधान भी है। जैसे मान लो मैं भी वैसी ही किसी देवी की तरह से होती, जिनके विषय में आपने सुना है– हर समय हाथ में तलवार उठाए हुए, तो कोई भी मेरे समीप न आता। शेर या चीते पर सवार, तो कौन मेरे समीप आता, तो कौन मुझसे प्रश्न पूछता, कौन व्याख्या करता ? मुझे आपको समझाना होता है। मुझे बहुत से कार्य करने होते हैं, मुझे आपको बताना होता है, आपकी समस्याओं की ओर इशारा करना होता है, यह कार्य कोई अन्य नहीं करेगा। इस बात को (श्री माताजी हँसती हैं) मजाक में न लें। इसे मनोरंजन न बनायें। कोई भी महान गुरू, उदाहरण के रूप में एक संगीतज्ञ, यदि अपने शिष्य को गलत स्वर में जाते देखे तो वह एकदम से उसके मुँह पर थप्पड़ मार देता

है। परन्तु महामाया तो ऐसा नहीं कर सकतीं। अन्यथा किसी भी चीज़ को सहन न किया जा पाता। ये सारी चीज़ें देवी देवताओं के सहन से परे हैं । वे सभी देवी देवता मेरे अन्दर विद्यमान हैं। मैं जानती हूँ कि वे मेरे अन्दर हैं, मैं उन्हें नियंत्रित करती हूँ क्योंकि मैं महामाया हूँ इसलिए मैं उन्हें नियंत्रित करती हूँ। मैं कहती हूँ कि अब यह कार्यान्वित होगा दोनों ही तरह से, परन्तु मैं आपके इतने समीप हूँ और जितना अधिक समीप होती हूँ, ये चीज़ आपके लिए और भी खराब है। उदाहरण के लिए, मेरे अपने बच्चे मुझे स्वीकार नहीं करेंगे, मेरे नाती–नातिनें मुझे जल्दी स्वीकार नहीं करेंगे, मेरे पति मुझे जल्दी से स्वीकार नहीं करेंगे। मेरे सम्बन्धी मुझे स्वीकार नहीं करेंगे और यदि वे मुझे पूर्ण रूपेण स्वीकार कर लेते हैं तो वे अत्यन्त ही महान लोग हैं। उनका मुझे स्वीकार न करना एक प्रकार से अच्छा ही है क्योंकि मेरा पूरा परिवार यदि मेरे साथ होता तो लोग सोचते कि इन्होंने एक संस्था चालू कर दी है। अतः ये बात अच्छी लगती है कि जब तक संभव हो उन्हें इससे (सहजयोग) बाहर रखा जाए। ऐसा करना कठिन नहीं है। मेरे विचार से अब समय आ गया है कि वो सभी लोग इसमें कूद पड़ें। अब मैंने स्वयं को स्थापित कर लिया है, आप सब लोग जानते हैं कि मैं सम्बन्धियों को कोई विशेष महत्व नहीं देती।

सभी शास्त्रों में सहजयोग का वर्णन किया गया है। परन्तु हमें सभी धर्मों को उनके वास्तविक और शुद्ध रूप में लाना होगा। यही कार्य है जिसे आप लोगों ने करना है, सभी धर्मों को उनके शुद्ध रूप में लाना और मानव सृजित

धर्म के अनुसार आँखे बन्द करके चलते जाना नहीं। इन धर्मों का सृजन अवतरणों ने किया था मनुष्यों ने नहीं। मानव ने तो इन्हें बनावटी बना दिया है, सभी प्रकार की बेवकूफी धर्मों के साथ की है।

हमें याद रखना है कि धर्म के सच्चे और शुद्ध स्वरूप में हमें इसका सम्मान करना है क्योंकि सभी धर्म एक ही हैं। आप यदि धर्म के सच्चे स्वरूप को देखें तो फूल की भिन्न पंखुड़ियों की तरह से सभी धर्म एक हैं। देखने में चाहे वे एक सम न लगें परन्तु सभी पंखुड़ियों से मिलकर ही फूल बनता है।

पंचमी – नवरात्रि, 15–10–1988

अथार्गलास्तोत्रम्

ॐ अस्य श्री अर्गलास्तोत्रमन्त्रस्य विष्णुर्ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः,
श्री महालक्ष्मीर्देवता, श्री जगदम्बाप्रीतये सप्तशती पाठाङ्गत्वेन जपे विनियोगः।।

ॐ नमश्चण्डिकायै।।

मार्कण्डेय उवाच

ॐ जयन्ती मंगला काली भद्रकाली कपालिनी।
दुर्गा क्षमा शिवा धात्री स्वाहा स्वधा नमोऽस्तुते।। 1।।

जय त्वं देवि चामुण्डे जय भूतार्तिहारिणी।
जय सर्वगते देवि कालरात्रि नमोऽस्तुते।। 2।।

ॐ चण्डिका देवी को नमस्कार है।

मार्कण्डेय जी कहते हैं–जयन्ती, मंगला, काली, भद्रकाली, कपालिनी, दुर्गा, क्षमा, शिवा, धात्री स्वाहा और

स्वधा –इन नामों से प्रसिद्ध जगदम्बिके! आपको मेरा नमस्कार है। देवि चामुण्डे! आपकी जय हो! सम्पूर्ण प्राणियों की पीड़ा हरने वाली देवी! आपकी जय हो। सबमें व्याप्त रहने वाली देवी! आपकी जय हो। कालरात्रि! आपको नमस्कार हो।। 2।।

मधुकैटभविद्राविविधातृवरदे नमः।

रुपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ।। 3।।

मधु और कैटभ को मारने वाली तथा ब्रह्माजी को वरदान देने वाली देवी! आपको नमस्कार है। आप मुझे रूप (आत्मस्वरूप का ज्ञान) दें, जय (मोह पर विजय) दें, यश (मोह–विजय तथा ज्ञान–प्राप्तिरूप यश) दें और काम–क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करें ।। 3।।

महिषासुर निर्णाशि भक्तानां सुखदे नमः।

रुपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ।। 4।।

महिषासुर का नाश करने वाली तथा भक्तों को सुख देने वाली देवी! आपको नमस्कार है। आप रूप दें जय दें, यश दें और काम क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करें ।। 4।।

रक्तबीजवधे देवी चण्डमुण्डविनाशिनी।

रुपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ।। 5।।

रक्त बीज का वध और चण्ड–मुण्ड का विनाश करने वाली देवी! आप रूप दें, जय दें, यश दें और काम क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करें ।। 5।।

शुम्भस्यैव निशुम्भस्य धूम्राक्षस्य च मर्दिनि।

रुपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ।। 6।।

शुम्भ निशुम्भ तथा धूम्रलोचन का मर्दन करने वाली देवी! आप रूप दें, जय दें, यश दें, और काम क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करें ।। 6।।

वन्दिताङ्घ्रियुगे देवी सर्वसौभाग्यदायिनि।

रुपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ।। 7।।

सबके द्वारा वन्दित युगल चरणोंवाली तथा सम्पूर्ण सौभाग्य प्रदान करने वाली देवी! आप रूप दें, जय दें, यश दें और काम क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करें ।। 7।।

अचिन्त्यरुपचरिते सर्वशत्रुविनाशिनि।

रुपं देहि जयं यशो देहि द्विषो जहि ।। 8।।

देवि। आपके रूप और चरित्र अचिन्त्य हैं। आप समस्त शत्रुओं का नाश करने वाली हो। आप रूप दें, जय दें, यश दें और काम क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करें ।। 8।।

नतेभ्यः सर्वदा भकत्या चण्डिके दुरितापहे।

रुपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ।। 9।।

पापों को दूर करने वाली चण्डिके! जो भक्ति पूर्वक आपके चरणों में सर्वदा मस्तक झुकाते हैं, उन्हें रूप दें, जय दें, यश दें और काम क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करें।। 9।।

स्तुवद्भ्यो भक्ति पूर्वत्वांचण्डिके व्याधिनाशिनि।

रुपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ।। 10।।

रोगों का नाश करने वाली चण्डिके! जो भक्तिपूर्वक आपकी स्तुति करते हैं, उन्हें रूप दें, जय दें, यश दें और उनके काम क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करें ।। 10।।

चण्डिके सततं ये त्वामर्चयन्तीह भक्तितः।

रुपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विशो जहि।। 11।।

चण्डिके! इस संसार में जो भक्तिपूर्वक आपकी पूजा करते हैं उन्हें रूप दें, जय दें, यश दें और काम क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करें ।। 11।।

देहि सौभाग्यमारोग्यं देहि मे परमं सुखम्।

रुपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ।। 12।।

मुझे सौभाग्य और आरोग्य दें। परम सुख दें, रूप दें, जय दें, यश दें और काम क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करे ।। 12।।

विधेहि द्विशतां नाशं विधेहि बलमुच्चकैः।

रुपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ।। 13।।

जो मुझसे द्वेष रखते हों, उनका नाश और मेरे बल की वृद्धि करें। रूप दें, जय दें, यश दें और काम क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करें ।। 13।।

विधेहि देवि कल्याणं विधेहि परमां श्रियम्।

रुपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ।। 14।।

देवि! मेरा कल्याण करें। मुझे उत्तम सम्पत्ति प्रदान करें। रूप दें, जय दें, यश दें और काम क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करें ।। 14।।

सुरासुरशिरोरत्ननिघृष्टचरणेऽम्बिके।

रुपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि।। 15।।

अम्बिके! देवता और असुर दोनों ही अपने माथे के मुकुट की मणियों को आपके चरणों पर घिसते रहते हैं। आप रूप दें, जय दें, यश दें और काम क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करें ।।15।।

विद्यावन्तं यशस्वन्तं लक्ष्मीवन्तं जनं कुरु।

रुपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ।। 16।।

अपने भक्तजनों को विद्वान, यशस्वी और लक्ष्मीवान बनायें तथा रूप दें, जय दें, यश दें और उनके काम क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करें ।। 16।।

प्रचण्डदैत्यदर्पघ्ने चण्डिके प्रणताय मे।

रुपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ।। 17।।

प्रचण्ड दैत्यों के अहंकार का दलन करने वाली चण्डिके! मुझ शरणागत को रूप दें , जय दें, यश दें और काम क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करें ।। 17।।

चतुर्भुजे चतुर्वक्त्रसंस्तुते परमेश्वरी।

रुपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि।। 18।।

चतुर्मुख ब्रह्माजी के द्वारा प्रशंसित, चार भुजा धारिणी परमेश्वरी। रूप दें, जय दें, यश दें और काम क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करें ।। 18।।

कृष्णेन संस्तुते देवि शश्वद्भक्त्या सदाम्बिके।

रुपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ।। 19।।

देवि अम्बिके! भगवान विष्णु नित्य निरन्तर भक्तिपूर्वक आपकी स्तुति करते रहते हैं। आप रूप दें, जय दें, यश दें और काम क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करें।। 19 ।।

हिमाचल सुतानाथसंस्तुते परमेश्वरि।

रुपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ।। 20।।

हिमालय कन्या पार्वती के पति महादेवजी के द्वारा प्रशंसित होने वाली परमेश्वरी! आप रूप दें, जय दें, यश दें और काम क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करें ।। 20।।

इन्द्राणीपति सद्भावपूजिते परमेश्वरि।

रुपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ।। 21।।

शचीपंति इन्द्र के द्वारा सद्भाव से पूजित होने वाली परमेश्वरी! आप रूप दें, जय दें, यश दें और काम क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करें ।। 21।।

देवि प्रचण्डदोर्दण्डदैत्यदर्पविनाशिनि।

रुपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ।। 22।।

प्रचण्ड भुजदण्डोवाले दैत्यों का घमण्ड विनाश करने वाली देवी! आप रूप दें, जय दें, यश दें और काम क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करें ।। 22।।

देवि भक्तजनोद्दामदत्तानन्दोदयेऽम्बिके।

रुपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ।। 23।।

देवि अम्बिके! आप अपने भक्तजनों को सदा असीम आनन्द प्रदान करती रहती हो। मुझे रूप दें, जय दें, यश दें और काम क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करें ।। 23 ।।

पत्नीं मनोरमां देहि मनोवृत्तानुसारिणीम्।

तारिणीं दुर्गसंसारसागरस्य कुलोद्भवाम् ।। 24 ।।

मन की इच्छा के अनुसार चलने वाली मनोहर पत्नी प्रदान करें, जो दुर्गम संसार सागर से तारने वाली, उत्तम कुल में उत्पन्न हुई हो ।। 24 ।।

इदं स्तोत्रं पठित्वा तु महास्तोत्रं पठेन्नरः।

सतुसप्तशतीसंख्यावर्माप्नोति सम्पदाम् ॐ।। 25 ।।

जो मनुष्य इस स्तोत्र का पाठ करके सप्तशती रूपी महास्तोत्र का पाठ करता है, वह सप्तशती की जपसंख्या से मिलने वाले श्रेष्ठ फल को प्राप्त होता है। साथ ही वह प्रचुर सम्पत्ति भी प्राप्त कर लेता है ।। 25।।

इति देव्या अर्गलास्तोत्रं सम्पूर्णम्।

पंचमी – नवरात्रि, 15–10–1988

आप सब सहजयोगी हैं आपकी नियति क्या है ? आपकी नियति आध्यात्मिक सफलता, आध्यात्मिक उत्थान प्राप्त करना है।

देवी ने चण्डमुण्ड का वध किया इसीलिए वे चामुण्डा कहलाई। इस कलियुग में वे सब वापिस आ गए हैं–सब के सब।

देवी से प्रार्थना

"हे देवी, कृपा करके हमें आध्यात्मिक व्यक्तित्व प्रदान करें, हमें विजयी करें, आध्यात्मिक उत्थान दें और हमारे शत्रुओं को नष्ट करें।

श्रीमाताजी द्वारा जोगवा का अनुवाद तथा व्याख्या

सन्त एकनाथ प्रतिष्ठान के रहने वाले थे जिसे पैंठन भी कहा जाता है। उन्होंने यह जोगवा लिखा था इसका अर्थ है 'योग'। उस समय उन्होंने गँवई भाषा में गाया और उसके पश्चात् महाराष्ट्र के बहुत से लोगों ने जोगवा गाया। आप कल्पना करें कि ये भजन इतने वर्षों पूर्व लिखा गया था और आज आप लोगों ने इसे

सहजयोग के अनुरूप बना लिया है। परन्तु इसमें संक्षिप्त रूप से भली भाँति वर्णन किया गया है कि उस समय उन लोगों ने क्या इच्छा की थी। महाराष्ट्र में देवी को "बाया" कहकर पुकारा जाता है। आपको हैरानी होगी की बचपन में मेरा नाम भी "बाया" था। परिवार के सभी लोग मुझे ''बाया'' कहकर पुकारते थे।

भजन के आरम्भ में कवि कहता है कि मैं माँ (देवी) से योग माँगूगा। महाराष्ट्र के गाँवों में योग को जोगवा कहते हैं। कवि इसे "बायचा जोगवा" अर्थात् देवी बाया प्रदत्त जोगवा कहता है और यह जोगवा माँगता है। अब, "आनन्दी निर्गुणी" का अर्थ है 'आद्या' (Primordial) या उससे भी परे, जो गुणातीत हो। देवी पृथ्वी पर भवानी रूप में प्रकट हुईं। वे महिषासुर का वध करने के लिए आईं तथा वे यहाँ 'त्रिविध तपाँची कराव्या झण्डाणी' अर्थात् तीन प्रकार के ताप दुख को दूर करने के लिए आई हैं। अब वो हमें निर्वाण प्रदान करने के लिए आयेंगी। ये बात उन्होंने उस समय कही थी। कवि कहते हैं, जब देवी मेरे 'निर्वाण' के लिए आयेंगी तब मैं क्या करुँगा ? मुझमें अभी द्वैत है अर्थात् मैं अभी तक स्वयं को परमात्मा से अलग मानता हूँ। द्वैत का अर्थ है कि आप इस विश्व को परमात्मा से अलग मानते हैं। जब हम ये सोचते हैं कि ये अद्वेत है अर्थात् हम परमात्मा से एकरूप हैं, तब मैं इस द्वैत को समाप्त करूँगा और उनके (देवी के) गले में पुष्प माला डालूँगा, अपने हाथ में ज्योतित ज्ञान का झण्डा पकडूँगा और बिना जाति या धर्म के भेद–भाव के मैं देवी दर्शन को जाऊँगा। इसके बाद मैं क्या करूँगा ? इसके बाद नौ दिनों तक मैं नौ प्रकार से देवी की भक्ति करूँगा।

तब मैं अन्य सभी माँगें छोड़ दूँगा और ज्ञान रूपी पुत्र की कामना करूँगा। तत्पश्चात् मैं क्या करूँगा (कवि यहाँ एक महिला के रूप में गा रहा है) – वह कहता है कि ये विश्व दम्भ से परिपूर्ण है। ऐसे खराब पुत्र (दम्भ) को मैं त्याग दूँगा और उस प्रधी (पुष्पों की टोकरी) में सारा ज्योतित ज्ञान भर दूँगा और सारी आशाओं, मंशाओं को पूर्ण रूप से तोड़कर मैं उन्हें समाप्त कर दूँगा। 'मनोविकारा करीन कुरबन्दी'– मैं अपने सारे मनाविकारों कों, अपने बन्धन ग्रस्त मस्तिष्क को तोड़ दूँगा (जैसे हिन्दी में कहते हैं कि अपनी खराब आँख को निकाल दें) अतः मैं पृथ्वी माँ के गर्भ से 'अमृतरसाँचीभरीन मे धुरदी' अमृत रस निकालकर अपनी इस टोकरी को भर लूँगा।

प्रेयसी के रूप में कवि अपनी सखी से कहता हे कि हे सखी! अब मैं पूर्णतः निर्लिप्त (निःसंग) हो गया हूँ और संदेह रूपी अपने पति को मैंने त्याग दिया है, अर्थात् अब मेरे अन्दर सन्देह का कोई स्थान नहीं रहा। तत्पश्चात् वह कहती है कि 'काम–क्रोध', मृत शरीरों का दाह संस्कार करने वाले तुच्छ जाति के इन दो लोगों (मंग) को मैंने त्याग दिया है और बाकी बची हुई सभी प्रकार की नकारात्मकतायें भी मैंने त्याग दी हैं। अब मैंने अपनी सुरंग (सुषुम्ना) को खोल दिया है।

मैंने यही योग परमात्मा से माँगा था। इसे प्राप्त करके मैंने इसे अपने पास संजोया है और उस सर्वशक्तिमान परमात्मा के बुलन्द दरवाजे पर जाकर मैंने उनका धन्यवाद किया है। अब मैं जीवन और मृत्यु की समस्याओं से मुक्त हो गई हूँ।

इस प्रकार स्पष्टरूप से एक महिला यह गा रही है। उस समय उन्होंने यह सब लिखा था और आप सब तो वे फल पूर्ण रूप से उसी तरह प्राप्त कर रहे हैं। अब अपने विषय में और अन्य लोगों के विषय में हमें कुछ प्रण करने हैं । हमें एक महान तथ्य याद रखना है – अब हम योगी हैं। एक सहजयोगी के रूप में अपने आचरण में, अपने स्वभाव से, अन्य लोगों से व्यवहार करते हुए किसी भी स्थिति का मुकाबला करते हुए, किसी भी समस्या का समाधान करते हुए सर्वोत्कृष्ट (Par-excellence) होना होगा। आप लोगों में से कुछ का मस्तिष्क बहुत अच्छा है परन्तु हृदय की कमी है, कुछ का हृदय विशाल है परन्तु मस्तिष्क की कमी है। अतः संतुलन का लाया जाना आवश्यक है। **महानतम से भी महानतम ज्ञान से यह जानना है कि 'परमात्मा ही प्रेम है,' वे केवल प्रेम हैं और यदि आप एक सहजयोगी को भी प्रेम नहीं कर सकते तो आपको ये बात जान लेना आवश्यक है कि आपमें कोई भयानक कमी है जिसका समाप्त होना आवश्यक है। प्रेम होना ही चाहिए। इसी प्रेम को हम निर्वाज्य कहते हैं अर्थात इस पर कोई ब्याज नहीं होता, केवल मूलधन होता हैं।** अभिप्राय ये है कि आप परस्पर एक दूसरे को इस प्रकार प्रेम करते हैं कि आप केवल देते ही देते हैं, किसी चीज की आशा नहीं करते। सदैव देते ही रहें क्योंकि देने का आनन्द सर्वोच्च है। अपने अनुभव से यह बात मैं आपको बताती हूँ कि मुझे महानतम आनन्द तब मिलता है जब किसी को मैं आत्म–साक्षात्कार देती हूँ और दूसरा आनन्द तब मिलता है जब मैं अपनी चीजें दूसरों को देती हूँ। तीसरा आनन्द ये है कि मैं ये सब चीजें

अन्य लोगों को दे सकती हूँ।

अब आप लोग केवल प्राप्त करने वाले ही नहीं हैं, आपमें देने का भी क्षमता है। आपको इस बात का पता होना चाहिए कि आपने अन्य लोगों को क्या दिया है। इसके विपरीत यदि अब भी लोगों को केवल अपना क्रोध देते हैं, अपना लालच आदि बुराइयाँ दर्शाते हैं तो यह बात सहजयोगियों को शोभा नहीं देती। ऐसी स्थिति में आपको समझ लेना होगा कि अभी भी कुछ कमी रह गई हैं। अभी भी यदि आप छोटी–छोटी चीजों जैसे कपड़े, खाना, सुख–सुविधायें आदि पर बहुत ध्यान देते हैं तो जान लें आपमें कुछ कमी हैं आपका व्यक्तित्व अभी अपूर्ण है। "एक वाक्य हमेशा याद रखें, स्वयं से प्रश्न करें कि क्या मैंने अपना लक्ष्य प्राप्त कर लिया है?"

यह प्रश्न आप हमेशा स्वयं से पूछें कि क्या मैंने अपना लक्ष्य प्राप्त कर लिया है ? इससे स्थिति स्पष्ट हो जाएगी क्योंकि अब आप स्वयं के गुरु हैं, आप जानते हैं और समझते हैं। मस्तिष्क से आप सहजयोग को जानते हैं परन्तु सहजयोग जब आपके रोम–रोम में प्रवेश कर जाता है और पूर्ण ज्ञान आपके अस्तित्व का अंग प्रत्यंग बन जाता है तब स्थिति बिल्कुल ही भिन्न हो जाती है।

किसी भी चीज का सामना करते हुए आत्म–साक्षात्कारी व्यक्ति का दृष्टिकोण बिल्कुल भिन्न होता है। जैसे **मेरे सम्मुख यदि कोई समस्या आ जाए तो मैं तुरंत ध्यान में चली जाती हूँ और समस्या का**

समाधान हो जाता है, क्योंकि यह मेरी शक्ति है। इसी प्रकार से आपको भी यदि कोई समस्या हो तो यदि आप ध्यान में चले जाएंगे तो मेरी शक्ति आपकी समस्या का समाधान कर देगी। इसका अर्थ ये है कि ध्यान अवस्था में आप मेरे सम्मुख समर्पित हो जाते हैं, तब समस्या समाधान मेरा कार्य हो जाता है। परन्तु यदि आप मानसिक रूप से योजनायें बनाकर समस्याओं का समाधान करना चाहेंगे तब आप शिकंजे में फँस जायेंगे। सबसे अच्छा है कि जब भी कोई समस्या आपको परेशान करे तो आप केवल ध्यान में चले जाएं, प्रार्थना करने की भी कोई आवश्यकता नहीं – उस समस्या के साथ ध्यान में चले जाएं और आपको समस्या पर विजय प्राप्त होगी।

आज आप मुझसे विजय के बारे में पूछ रहे थे। मुझे आपसे बताना है कि ध्यान–अवस्था के किले में आप अत्यन्त सुरक्षित हैं और ध्यान अवस्था में ही आप भली भांति उन्नत हो सकते हैं, किसी भी अन्य अवस्था में आप उन्नत नहीं हो सकते। यह अवस्था वृक्ष के लिए धूप–सम है। आपको ध्यान में होना होगा, निर्विचारिता में रहना होगा। न तो आपने किसी का विरोध करना है, न किसी से असहमत होना है और न कुछ कहना है। विशेष रूप से अन्य सहजयोगियों को तो आपने कुछ कहना ही नहीं। किसी को यदि आप नालायकी करते हुए पायें तो बस ध्यान में चले जायें और चीजों

को परिवर्तित होते हुए देखकर आप हैरान होंगे और यही यह आपकी शक्ति है। इस विश्व में कितने लोगों ने आत्मसाक्षात्कार पाया है ? बहुत कम लोगों ने। वे बढ़ रहे हैं –ठीक है, सब कुछ कार्यान्वित कर रहे हैं परन्तु उनमें जिस चीज का अभाव है वह है ध्यान–शक्ति।

सर्वोत्तम बात तो यह है कि आप समर्पण कर दें और समर्पण करना अपेक्षाकृत सुगम है। हर समय सिर्फ आप मुझे अपने हृदय में स्थापित कर लें, यह साधारणतम उपाय है। तब इसके बिना आप जीवित ही न रह सकेंगे। इसके बिना आप जी न सकेंगे। आप स्वयं को खोया हुआ महसूस करेंगे। यह एक प्रकार से निर्लिप्त प्रेम हे। आपको लगेगा कि आप अत्यन्त शान्त, आशीर्वादित और सन्तुष्ट हैं। तब आपको किसी चीज की आवश्यकता नहीं होती। यह अवस्था व्यक्ति को स्थापित करनी चाहिए। आप लोगों के लिए ये अवस्था प्राप्त करना अत्यन्त सुगम है क्योंकि मैं साक्षात् आपके साथ हूँ। परन्तु जैसा मैंने आपको बताया था कि समस्या केवल इतनी है कि सहजयोग में सबसे पहले आपको मुझे पहचानना होगा। परन्तु मुझे पहचानना कुछ कठिन है क्योंकि मैं 'महामाया' हूँ और प्रायः आप महामाया के बुने हुए जाल में फँस जाते हैं। परन्तु जैसा मैंने उस दिन बताया था कि मेरे असली रूप में आप मेरे सम्मुख न टिक पाते। शेर पर सवार, हाथ में तलवार लिए हुए व्यक्ति की कल्पना कीजिए। आप उसके सम्मुख न टिक पाते। अतः मुझे महामाया बनना पड़ा और यही वास्तविकता है। इस रूप में आप मेरे समीप आ सकते हैं, मुझसे बातचीत कर सकते हैं, और यदि चाहें तो मुझसे सीख भी लें सकते हैं। इस प्रकार से यह विचार विनिमय बेहतर रूप से किया

जा सकता है। सभी चीजों के रहस्य मैं आपको बता सकती हूँ। उत्थान के विषय में मैं सभी कुछ बता सकूँगी। **मात्र इतना जान लेना, कि आप महामाया के सम्मुख बैठे हैं, ही बहुत सहायक है।** अतः महामाया के आवरण से भ्रमित न हों। अपनी मर्यादाओं में, सूझ–बूझ में, हर गतिविधि में आपको स्मरण रखना है कि हमें गलतियाँ नहीं करनी, हमें समर्पित रहना है। स्वतः ही आप सब कुछ सीख जायेंगे। आपको सिखाने के लिए कुछ भी नहीं है।

यह अवस्था ऐसी है जैसे पेड़। जब यह यौवन पर आता है तो यह फूल प्रदान करता है और फूल परिपक्व होकर फल देते हैं। इसी प्रकार से आपको भी बनाया गया है। इसी प्रकार से आप उन्नत होते हैं। **तब आप अपनी उन्नति को महसूस करते हैं, इसका आनन्द लेते हैं और प्रसन्नता पूर्वक जीवन गुजारते हैं। अतः मेरा अन्तिम लक्ष्य केवल इतना है कि मैं आपको खुशियाँ दूँ , आनन्द दूँ। इसी कारण से यह सारा संघर्ष चल रहा है। मुझे आशा है कि मैं अपना लक्ष्य और आपका लक्ष्य भी प्राप्त कर सकूँगी।**

परमात्मा आपको आशीर्वादित करें।

षष्ठी – नवरात्रि, 16–10–1988

आज हम लोग यहाँ शक्ति की पूजा करने के लिए एकत्रित हुए हैं। अभी तक अनेक संत साधुओं ने, ऋषि मुनियों ने शक्ति के बारे में बहुत कुछ लिखा और बताया। जो शक्ति का वर्णन वह अपने गद्य में नहीं कर पाये उसे उन्होंने पद्य में किया और उस पर भी इसके बहुत से अर्थ भी जाने। लेकिन एक बात शायद हम लोग नहीं जानते कि हर मनुष्य के अन्दर ये सारी शक्तियाँ सुप्तावस्था में हैं और ये सारी शक्तियाँ मनुष्य अपने अन्दर जागृत कर सकता है। ये सुप्तावस्था की जो शक्तियाँ हैं उनका कोई अन्त नहीं, न ही उन का अनुमान कोई दे सकता है क्योंकि ऐसे ही पैंतीस कोटि तो देवता आपके अन्दर विराजमान हैं। उस के अलावा न जाने कितनी शक्तियाँ उनको चला रही हैं। लेकिन इतना हम लोग समझ सकते हैं कि जो हमनें आज आत्मसाक्षात्कार को प्राप्त किया है उसमें जरूर कोई न कोई शक्तियों का कार्य हुआ। उस कार्य के बगैर आत्मसाक्षात्कार को नहीं प्राप्त कर सकते। ये आत्मसाक्षात्कार को प्राप्त करते वक्त हम लोग सोचते हैं सहज में हो गया।

सहज के दो अर्थ हैं। एक तो सहज का अर्थ ये भी है कि आसानी से हो गया, सरलता से हो गया और दूसरा अर्थ ये होता है कि जिस तरह से एक जीवन्त क्रिया अपने आप हो जाती है उसी प्रकार आपने आत्मसाक्षात्कार को

प्राप्त किया। लेकिन ये जीवन्त क्रिया जो है इसके बारे में अगर आप सोचने लग जायें तो आपकी बुद्धि कुण्ठित हो जाएगी। समझ लीजिए ये आपने एक पेड़ देखा। इस पेड़ की ओर आप नजर करिए तो आप ये सोचेंगे कि भई ये फलाना पेड़ है। लेकिन इस पेड़ को इसी रूप में, ऐसा ही, इतना ऊँचाई पर लाने वाली कौन सी शक्तियाँ हैं ? किस शक्ति ने इस को यहाँ पर इस तरह से बनाया है कि जो वह अपनी सीमा में रहकर के और अपने स्वरूप, रूप, उसी के साथ चढ़ता है। फिर सबसे जो कमाल की चीज है, वह मानव, मनुष्य जो बनाया गया है वह भी एक विशेष रूप से, एक विशेष विचार से बनाया गया है और मनुष्य का जो भविष्य है वह उसे प्राप्त हो सकता है, उस को मिल सकता है पर उसकी पहली सीढ़ी है आत्मसाक्षात्कार। जैसे कि कोई दीप जलाना हो तो सबसे पहले है कि उस के अन्दर ज्योति लानी पड़ती है। उसी प्रकार एक बार आपके अन्दर ज्योति जागृत हो गई तो आप उस को फिर से प्रज्जवलित कर सकते हैं या उस को आप बढ़ा सकते हैं। पर प्रथम कार्य है कि ज्योति प्रज्जवलित हो और उसके लिए आत्मसाक्षात्कार नितांत आवश्यक है। किन्तु आत्मसाक्षात्कार पाते ही सारी शक्तियाँ जागृत नहीं हो सकती। इसलिए साधु संतों और ऋषि मुनियों ने व्यवस्था की है कि आप देवी की उपासना करें। लेकिन जो आदमी आत्मसाक्षात्कार को प्राप्त नहीं है, उस को अधिकार नहीं है कि वो देवी की पूजा करे। बहुत से लोगों ने मुझे बताया कि वे सप्तशती का कभी अग़र पाठ करें और उनका हवन करते हैं तो उनपर बड़ी आफतें आ जाती हैं और उन को बड़ी तकलीफ़ हो जाती है और वे बहुत कष्ट उठाते हैं।

तो उनसे ये पूछना चाहिए कि आपने किस से करवाया ? तो कहेंगे कि हमने सात ब्राह्माणों को बुलाया था। पर वे ब्राह्मण नहीं। जिन्होंने ब्रह्म को जाना नहीं वे ब्राह्मण नहीं और ऐसे ब्राह्मणों से कराने से ही देवी रुष्ट हो गईं और आपको तकलीफ हुई। तो आपके अन्दर एक बड़ा अधिकार है कि आप देवी की पूजा कर सकते हैं और साक्षात में भी पूजा कर सकते हैं। ये अधिकार सबको नहीं है। अगर कोई कोशिश करे तो उसका उल्टा परिणाम हो सकता है। सबसे बड़ी चीज है कि शक्ति जो है वह जितनी ही आपको आरामदेही है, जितनी वह आपके सृजन की व्यवस्था करती है, जितनी वह आपके प्रति उदार और प्रेममयी है, उतनी ही वह क्रूर और क्रोधमयी है। कोई बीच का मामला नहीं है, या तो अति उदार है और या तो अति क्रूर है। बीच में कोई मामला चलता नहीं। वजह यह है कि जो लोग महादुष्ट हैं, राक्षस हैं और जो संसार को नष्ट करने पर आमादा हैं, जो लोगों को भुलभुलैया में लगाये हुए हैं और कलियुग में अपने को अलग–अलग बता कर के कोई साधु बना है तो कोई पंडित बना हुआ है, कोई मन्दिरों में बैठा है तो कोई मस्जिदों में बैठा है, कोई मुल्ला बना हुआ है, कोई पोप बना हुआ है तो कहीं कोई पोलिटिशियन बना हुआ है, ऐसे अनेक–अनेक कपड़े परिधान कर के जो अपने को छिपा रहा है, जो कि राक्षसी वृत्ति का मनुष्य है उसका नाश होना आवश्यक है। लेकिन ये जो नाश की शक्तियाँ हैं इसकी तरफ आपको नहीं जाना चाहिए। आप सिर्फ इच्छा मात्र करें और ये शक्तियाँ अपने ही आप कार्य कर लेगीं।

तो सारे संसार में जो यह चैतन्य बह रहा है ये उसी महामाया की शक्ति है और इस महामाया की शक्ति से ही सारे कार्य होते हैं और ये शक्ति सब चीज सोचती है, जानती है, सब को पूरी तरह से व्यवस्थित रूप से लाती है, जिसे कहते हैं आयोजित कर लेती है और सबसे बड़ी चीज है कि ये आप पर प्रेम करती है और इसका प्रेम निर्वाज्य है। इस प्रेम में कोई भी माँग नहीं, सिर्फ देने की इच्छा है। आपको पनपाने की इच्छा है, आपको बढ़ाने की इच्छा है। आपकी भलाई की इच्छा है। लेकिन इस के साथ–साथ जो चीजें काँटे बन कर के आपके मार्ग में रुकावट डालेंगे, आपके धर्म में खलल डालेंगे, या किसी भी तरह से आप को तंग करेंगे, ऐसे लोगों का नाश करना अत्यावश्यक है। लेकिन उस के लिए आप अपनी शक्ति न लगायें। आप को सिर्फ चाहिए कि आप उस शक्ति के लिए सिर्फ आह्वान करें देवी का और उनसे कहिए कि ये जो अमानुष लोग हैं इनका आप नाश कर दीजिए। यह तो पहली चीज हो गई। सो आप को छुट्टी मिल गई कि कोई भी आप पर अगर अत्याचार करे, कोई भी आप से बुराई से बोले, कोई आप को सताये तो आप में एक और विशेष रूप से एक स्थिति है जिसमें आप निर्विचार हो जायें। तो सारी चीज को आप साक्षी रूप से देखना शुरू कर दें, एक नाटक के रूप में। जैसे अजीब पागल आदमी है मेरे पीछे पड़ा हुआ है, इसको क्या करने का है ? उसका पागलपन देखिए, उसका मनस्ताप देखिए, उसकी तकलीफें देखिए और आप उस पर हँसिए कि अजीब बेवकूफ है! उस के लिए आप को कोई तकलीफ उठाने

की जरूरत नहीं। उस के लिए सिर्फ आप को आपका जो किला है,निर्विचारिता, उसमें जाना चाहिए और निर्विचारिता में जाते ही आपकी जो कुछ भी संजोने वाली शक्तियाँ हैं, आनन्द देने वाली शक्तियाँ हैं, प्रेम देने वाली शक्तियाँ हैं, वो सब की सब समेट कर के आपके अन्दर आ जायेंगी। लेकिन जब तक आप इन चीजों में उलझे रहेंगे और जब तक आप ये सोचते रहेंगे कि मैं कैसे इसका सर्वनाश कर दूँ, इसको मैं किस तरह से खत्म कर दूँ , इसमें मैं क्या इलाज कर लूँ और इस तरह से आप षडयन्त्र बनाते रहेंगे, तब तक, आप सच्ची मानिए कि उसका असर आप पर होगा, उस पर नहीं।

रामदास स्वामी ने कहा है कि 'अल्प धारिष्ट पाये', माने आप का थोड़ा सा जो धीरज है उसको परमात्मा देखता है। लेकिन आप के अन्दर इतनी ज्यादा शक्तियाँ हैं, इतनी ज्यादा शक्तियाँ हैं कि उनको पहले आपको पूरी तरह से प्रफुल्लित करना चाहिए। अपने प्रति एक तरह का बड़ा आदर रखना चाहिए, उनको जानना चाहिए। अपने प्रति एक तरह का बड़ा आदर रखना चाहिए। जब ये शक्तियाँ नष्ट होती हैं, सहजयोगियों में भी जागती हैं फिर नष्ट हो जाती हैं, जागती हैं फिर नष्ट हो जाती हैं। उसकी क्या वजह है ? एक बार जगी हुई शक्ति क्यों नष्ट होती है ? जैसे कि एक मनुष्य में आज शक्ति है कि वह बड़े भारी कला में निपुण हो गया। सहजयोग में, आप में बहुत से लोग कला में निपुण हो गये, कला के बारे में जान गये, उनमें एक तरह की बड़ी चेतना आ गई, उनका सृजन बहुत बढ़ गया। लोग देख के कहते हैं कि वाह! एक कलाकार ऐसा है कि समझ में

ही नहीं आता। पर फिर वह उसी कला में उलझ जाता है। फिर उस की शोहरत हो गई, नाम हो गया, उसी में उलझता जाता है। जब वह उलझ जाता है इस चीज में, तब फिर उस की शक्तियाँ नष्ट हो जाती हैं क्योंकि उस की शक्तियाँ भी उस में उलझ जाती हैं। जैसे कि मैंने पहले भी बताया था कि किसी पेड़ के अन्दर बहता हुआ उसका जो प्राण रस है वह हर चीज में, हर पत्ते में, हर डाली पर, हर फूल में, हर शाखा में घूम घाम कर के वापिस लौट जाता है। उसी प्रकार जो भी आप के अन्दर शक्तियाँ आज प्रवाहित हैं और जिन शक्तियों के कारण आप आज कार्यान्वित हैं वे सारी ही चीजें, आप को जानना चाहिए कि इस शक्ति का ही प्रादुर्भाव है और उस में आप को उलझने की कोई जरूरत नहीं। आप उस में एक निमित्त् मात्र, बीच में हैं। जब आप यह समझ जायेंगे कि हम निमित्त मात्र हैं तो यह आपकी शक्तियाँ कभी भी दुर्बल नहीं होंगी और कभी भी नष्ट नहीं होंगीं। उसी प्रकार अनेक बार मैंने देखा है कि सहजयोगियों का चित्त जो है वह ऐसी चीजों में उलझते जाता है। किसी चीज से भी वो बड़प्पन में आ गए, किसी भी चीज से उन्होंने बहुत प्रगति पा ली। आप जानते हैं कि बहुत से विद्यार्थी जो कि कक्षा में कुछ नहीं कर पाते थे, प्रथम दर्जे में आने लग गए। सब कुछ बहुत अच्छा हो गया। तो फिर वह कभी सोचने लग जायें, वाह हम तो कितने बड़े हो गए। जैसे ही ये सोचना शुरु हो गया, वैसे ही ये शक्तियाँ आपकी खत्म हो जायेंगी और गिरती जायेंगी।

अब सोचना यह है कि हमें क्या करना है ? जैसा समझ लीजिए किसी आदमी का एकदम बिजनेस बढ़

गया या उस को खूब रुपया मिलने लग गया या उस के पास कोई विशेष चीज़ आ गई तो उसे क्या करना चाहिए ? उसे हर समय सतर्क रहना चाहिए और यही कहना चाहिए कि माँ ये आप ही कर रही हैं। हम कुछ नहीं कर रहे हैं। ये आप ही की शक्ति कार्यान्वित है। हम कुछ नहीं कर रहे हैं। बहुत जरूरी है कि आप सतर्क रहें क्योंकि उस के बाद जब आपकी शक्तियाँ खत्म हो जायेंगी, तो आप खुद ही कहेंगे कि माँ सब चीज डूब गई, सब खत्म हो गया। ये कैसे ? जो भी शक्ति कार्य कर रही है उस को कार्यान्वित होने दें। जैसे एक पेड़ है समझ लीजिए, उस पेड़ के पत्ते कैसे गिरते हैं। आपने सोचा है ? उस में बीच में एक बुच के जैसी जिसे कॉर्क कहते हैं, बीच में आ जाती है। पत्ते और पेड़ के बीच में एक कॉर्क आ जाती है। आज इस की शक्ति एक महान शक्ति से जुड़ी है और वहाँ से वह उसे प्राप्त कर रहा है। लेकिन जैसे ही वह अपने को कुछ समझने लग जाए या उसके अहंकार में बैठ जाए या उसकी जो अनेक तरह की गतिविधियां हैं, जिस तरह की स्पर्धा आदि में उलझता जाए तो उसके बीच में एक दरार पड़ जाएगी और उस दरार के कारण वह मनुष्य फिर उसे प्राप्त नहीं कर सकता जो उसने प्राप्त किया हुआ है, क्योंकि वह तो एक निमित्त मात्र था। लेकिन जो शक्ति अन्दर उसके अन्दर बह रही थी वह शक्ति ही बीच में से कट गई। जैसे कि अभी इसकी (माइक) शक्ति कट जाए, तो शायद मेरा लेक्चर न बंद हो, पर ऐसे हो सकता है। हमको एक बात को खूब अच्छे से जान लेना चाहिए कि हमारे अन्दर जो शक्तियाँ जागृत हुई हैं और जो कुछ भी हमारे अन्दर की विशेष स्वरूप के व्यक्तित्व

को प्रकट करने वाली जो नई आभा हमें दिखाई दे रही है, इस शक्ति को हमें रोकना नहीं चाहिए। इस के ऊपर हमें यह नहीं सोचना चाहिए कि हम कुछ बहुत बड़े हो गए, या हमने कुछ बहुत बड़ा पा लिया। दूसरी तरफ से ऐसा भी होता है कि जब यह शक्ति आपके अन्दर जागृत हो जाती है उस वक्त आप में एक तरह का उदासीपन भी आ सकता है। इस तरह का कि अभी दूसरे साहब तो इतने पहुँच गए, हम तो वहाँ पहुँचे नहीं। उन्होंने ये कर लिया, हमने ये किया नहीं। और हर तरह से आदमी उलझते जाता है और उस में कुछ लोग ऐसे भी होते हैं जो छोटी–छोटी बातों पर ही अपने को दुखी मानते हैं, बहुत छोटी बातों पर, जैसे आप सब को बैग मिला मुझ को बैग नहीं मिला। गणपति पुले में हमें बड़े अजीब अजीब अनुभव आये कि लोग आये और कहने लगे कि माता जी हमको इस चीज़ का डिब्बा दे दो। मैंने कहा भई ये भी कोई तरीका हुआ ? दूसरे ने कहा कि आपने मुझे इतना दिया लेकिन उस को नहीं दिया। ये कोई बात हुई ? उस मौज में और आनन्द ये सब सोचने की बात ही नहीं है। छोटी–छोटी बात में वो दुखी हो जाते हैं। फिर ऐसी, जिसको बहुत बड़ी बात समझते हैं, कि किसी की समझ लीजिए पति ने विद्रोह कर दिया या किसी पति का रास्ता ठीक नहीं तो उसकी पत्नी रोते बैठेगी। या किसी की पत्नी ठीक नहीं हो तो पति रोते बैठेगा। अरे भई, आपकी कितनी बार शादियाँ हो चुकी पिछले जन्मों में और अब इस जन्म में एक शादी हुई चलो इस को किसी तरह से निभा लो। उसी के पीछे में आप लोग रात दिन परेशान रहो कि मुझको ये दुख आ गया, मरे बच्चे का ऐसा हो गया,

मेरी बच्ची का ऐसा हो गया। उस का ऐसा हो गया, उस का ऐसा हो गया। इस का कोई अन्त है ? इस का कोई पार कर सकता है ? क्योंकि इतनी छोटी सी चीज है कि वह तो पकड़ में ही नहीं आती। इतनी क्षुद्र बात है कि वह मेरी पकड़ में ही नहीं आती। कोई भी आयेगा तो ऐसी छोटी–छोटी बातें मुझे बताते हैं, मुझे बड़ी हँसी आती है। पर मैं चुपचाप, सुनती रहती हूँ। देखिए मैं कहती हूँ कि आप सहजयोगी हैं ? सागर के जैसे तो आपका हृदय मैंने बना दिया और हिमालय के जैसा आपका मैंने मस्तिष्क बना दिया और आप ये क्या छुटर–पुटर बातें कर रहे हो कि जिसका कोई मतलब ही नहीं रहता। इसकी बात, उसकी बात, दुनिया भर की फालतू की बातें करना और जो सहज की बात है वो बहुत कम होती है। उस में मौन लगता है, कि सहज में तो कुछ हमने ध्यान ही नहीं दिया। सहज में तो मौन हो जाता है।

अभी मैंने सुना कि पूना में लोग जरा कम आने लग गए हैं ध्यान में, क्योंकि टी वी पर महाभारत शुरु हो गया है। वैसे मैंने तो अभी तक देखा ही नहीं है महाभारत। जो एक देखा है वो ही काफी है। अब देखने की क्या जरूरत है ? अब अपने को दूसरा महाभारत करने का है क्या ? और वो महाभारत देख के बैठे हुए हैं। अब ऐसा आपको महाभारत देखने का शौक है तो उसकी वीडियो फिल्म मंगा लेना, देख लेना। लेकिन पूजा छोड़ कर के और आपका सेन्टर छोड़ कर के आप महाभारत देखते हैं तो आपकी वो शक्ति कहाँ दिखेगी ? वो महाभारत में चली गई। महाभारत हुए तो हजारों वर्ष हो गए उसी के साथ वो भी खत्म हो गई।

तो ये जो मनोरंजन पर भी लोगों का बड़ा ध्यान रहता है। किसी चीज से हमारा मनोरंजन हो। ऐसा ही हर एक चीज में मनुष्य उलझते जाता है। तो कोई भी चीज में अति में जाना ही सहज के विरोध में पड़ती है। जैसे अब **संगीत का शौक है तो संगीत ही संगीत है।** फिर ध्यान भी नहीं करने का। बस संगीत में पड़े हैं। मनोरंजन है। फिर कविता में पड़ गए तो कविता में ही उलझ गए। **कोई भी चीज में अतिशयता में जाना ही सहज के विरोध में जाता है।** ये इस बात को आप गाँठ बाँध कर रख लें। और दूसरी चीज, जो हमारी शक्तियाँ उन को सम्यक होना चाहिए। तभी हमें सम्यक ज्ञान मिलेगा, माने संघटित ज्ञान। अग़र एक ही चीज के पीछे में आप पड़े रहे और एक ही चीज को आप देखते रहे तो आपको सम्यक ज्ञान नहीं हो सकता है। आपको एक चीज का ज्ञान होगा। अब जैसे मैंने देखा है कि बहुत स्त्रियां होती हैं, बड़ी पढ़ी लिखी होती हैं पर कभी अखबार नहीं पढ़ती। उनको दुनिया में पता ही नहीं क्या हो रहा है। रहे आदमी लोग, तो उनका ऐसा है कि उनको सिर्फ ये मालूम है कि कौन सा खाना अच्छा बनता है, किस के घर में अच्छा खाना बनता है। किसके घर जाना चाहिए, अच्छा खाना खाने के लिए। एक खाने के मामले में तो हिन्दुस्तानी बहुत ही ज्यादा उलझे हुए लोग हैं। बहुत ज्यादा। और औरतें भी ऐसी हैं कि बेवकूफ बनाने के लिए अच्छे अच्छे खाने खिलाकर के उनको ठिकाने लगाती हैं। इसमें दोनों की शक्तियाँ उलझ जाती हैं, दोनों की। रात–दिन ये खाने के बारे में, मुझे आज ये खाने

को चाहिए, मुझे आज ये खाने को चाहिए, मैं ये टाइम को खाऊँगा, मैं वो टाइम से खाऊँगा। ये करूँगा। उधर औरतें, आदमियों को खुश करने के लिए, यही धन्धे करती रहती हैं। उसमें औरतों की शक्ति भी नष्ट होती है और आदमियों की भी शक्ति नष्ट होती है। इसलिए, मैंने यह तरीका निकाला है कि सहजयोगियों को सबको खुद खाना बनाना आना चाहिए। अगर किसी ने कहा मुझे ये खाने को चाहिए, तो आप ही बनायें। हालाँकि उस के बाद सबको भूखा ही रहना पड़ेगा। पर कोई हर्ज नहीं। आप को कहना चाहिए, अच्छा आपको ये चीजें खानी हैं तो आप ही इसको बना दीजिए, तो बड़ा अच्छा रहेगा। जब आप बनाना शुरु करेंगे तब आप समझेंगे कि ये चीज क्या है। क्योंकि किसी भी चीज की टीका टिप्पणी करनी तो बहुत आसान चीज है। किसी चीज को अच्छा कहना, बुरा कहना बहुत ही आसान चीज है। लेकिन वह खुद जब आप करने लगते हैं तो पता चलता है कि ये टीका–टिप्पणी हम जो कर रहे हैं ये बिल्कुल बेवकूफी है, क्योंकि हमें कोई अधिकार ही नहीं। तो इस कदर की छोटी छोटी चीजों में भी लोग मुझे आ कर बताते हैं। मुझे बड़ा आश्चर्य होता है। आप अब साधु हो गए हैं। आप के अन्दर सबसे बड़ी जो शक्ति आई है वह ये, आप कोशिश करके देखिए, और मैं बात करती हूँ उसकी प्रचीति आएगी। कोशिश कर के देखिए, आप जमीन पर सो सकते हैं, आप रास्ते पर सो सकते हैं। आप दस दस दिन भी भूखे रह जाएं आप को भूख नहीं लगेगी। आप कैसा भी खाना है, उसे खा लेंगे, आप कुछ नहीं कहेंगे।

इस में आप हमारे परदेस के सहजयोगियों को देखिए, किस हालात में रहते हैं, किस परेशानी में रहते हैं। हालाँकि वहाँ पर हिन्दुस्तानी सहजयोगियों ने बताया कि ब्रह्मपुरी में इन्तजाम सब ठीक नहीं रहा। लोगों का दिमाग ही खराब हो गया था। क्योंकि आप नहीं गए। तो बहुत तकलीफ हुई उनको खाने पीने की और कुछ अच्छा नहीं लगा। ऐसा बताया। तो मैंने उन लोगों से जा कर पूछा कि भई, सबसे ज्यादा तुमको कहाँ मज़ा आया, तो उन्होंने कहा, ''ब्रह्मपुरी में सबसे ज्यादा आया''। तो मेरी कुछ समझ में नहीं आया कि इतनी शिकायतें हुईं क्यों, ब्रह्मपुरी में क्या बात है ? तो कहने लगे कि वहाँ कृष्णा बहती है। उसके किनारे में बैठो तो लगता है कि माँ जैसे आप की धारा बह रही हो। वे सब यही बातें करते रहे। यहाँ ये लोग खाने पीने की सोचते हैं। इसीलिए जब कभी कभी लोग कहते हैं कि हम लोगों का समर्पण कम है तो उस की वजह यह है कि हम लोग काफी उलझे हुए लोग हैं। हमारे अन्दर बहुत पुरानी परंपरा है। यहाँ अनेक साधु संत हो गए, बड़े बड़े लोग हो गए, बड़े बड़े आदर्श हो गए और उन आदर्शों की वजह से हमें मालूम है कि अच्छाई क्या है। लेकिन उस के साथ ही साथ हमारे अन्दर एक तरह की ढोंगी वृत्ति आ गई। हम ढोंग भी कर सकते हैं। कोई भी आदमी अपने को राम कह सकता है। कोई भी आदमी अपने को भगवान कह सकता है, कोई भी आदमी अपने को सीता जी कह सकता है। ये ढोंगीपनें की हमारे यहाँ बड़ी भारी शक्ति है। एक साहब ने मुझे कहा कि देखिए वह तो भगवान हैं। मैंने कहा कैसे ? वह कहते हैं वह भगवान हैं। मैंने कहा उस को कहने में क्या

लगता है ? ऐसे कैसे कहेगा कोई कि मैं भगवान हूँ ? मैंने कहा–कह रहे हैं वो भगवान है, लेकिन उस के कुछ तरीके होते हैं। जो आदमी फूल को नहीं सूँघ सकता वह भगवान कैसे हो सकता है ? हाँ ये तो बात है, पर वह ऐसा क्यों कह रहे थे ? वो ऐसा क्यों कर रहे हैं ? मैंने कहा, क्योंकि वह आप नहीं। वह ये ही नहीं समझ सकते कि लोग इतना सफेद झूठ इतने जोर से कह सकते हैं या किसी के लिए कहते हैं। पर वह उस को रुपया ही चाहिए न, ठीक है वो रुपया लेता है लेकिन हम को तो वह आध्यात्मिकता देगा। तो क्या हर्ज है। हमें तो आध्यात्म लेना है, लेने दो रुपया, रुपये में क्या रखा है ? रुपया दे दो उस को। रुपयों में क्या रखा है। आध्यात्म के पाने की बात है। आध्यात्म अगर वह हम को दे रहा है तो हम उस को रुपया दे रहे हैं, रुपये में तो कोई खास चीज होती नहीं। ये जो उन की तैयारी आज हो गई है, वह हमारे अन्दर तैयारी अभी तक हो नहीं पाई इसके लिए, क्योंकि हमारे सामने आदर्श बहुत अच्छे हैं। महाभारत है, राम हैं, ये है, वो है और हम उसी कीचड़ में बैठे हुए हैं। अगर कोई कीड़ा कहे कि मैं कमल हो गया तो हो नहीं सकता और अगर उस को कमल बना भी दिया तो भी ढंग वही चलेगा। इसलिए समझ लेना चाहिए कि हमारे अन्दर ये जो इतनी ऊँची–ऊँची बातें हो गई और जिस से हम सारी तरफ से पूरी तरह से हम ढके हुए हैं और जिस के कारण हम लोग बहुत ऊँचे भी हैं, समझें कि हमें वही होना है जो हम देख रहे हैं। इस मामले में हमारे अन्दर आन्तरिक इच्छा हो, ऊपरी नहीं। अन्दर से लगना चाहिए। क्या हमने इसे प्राप्त किया ? क्या **हमने अपने ध्येय को प्राप्त**

किया ? क्या हमने इसे पाया है ? उसे हमें पाना है। इस मामले में ईमानदारी अपने साथ रखनी है और जब तक ईमानदारी नहीं होगी तब तक शक्ति आपके साथ ईमानदारी नहीं कर सकती। यह आपका और अपना निजी सम्बन्ध है। अनेक तरह से आप अपने को पड़तालिये और देखिए हमारे अन्दर ये शक्तियाँ क्यों नहीं जागृत हो रहीं ? क्यों नहीं हम इसे पा सकते ? कारण हम अपने को, खुद ही अपने को एक तरह से काटे चले जा रहे हैं।

तो किसी भी तरह की ढोंगी का सहजयोग में स्थान ही नहीं है। हृदय से आपको महसूस होना चाहिए। हर एक चीज को हृदय से पाना चाहिए। अपने अंतर आत्मा से उसको जानना चाहिए। उस के लिए कोई भी ऊपरी चीज आवश्यक नहीं । कोई हैं कि मुस्करा कर बैठे रहेंगे, कोई जरूरत है मुस्कुराने की ? कोई है कि बड़े गम्भीर हो के बैठे रहेंगे, ये सब नाटक करने की कोई जरूरत नहीं। जो आप के अन्दर भाव हैं वह बाहर आ रहा है उस में कौन सा नाटक करने की जरूरत है ? उस में कौन सी आफत करने की है ? जो हमारे अन्दर भाव है वही हम प्रकटित कर रहे हैं। क्योंकि हमारे अन्दर जो भाव है वो इस शक्ति से बहता हुआ बाहर चला आ रहा है और उस को हम प्रकटित कर रहे हैं। और, **लोग इस तरह से एक बात समझ लें कि हमें पूरी तरह से ईमानदारी से सहजयोग करना है तो धीरे–धीरे इसमें खिसकते जाएंगे। जिस तरह से वहाँ पर मैं लोगों में देखती हूँ आत्म समर्पण है उनमें, मैं यह जरूर कहूँगी कि उस आत्मसमर्पण के पीछे में एक बड़ी**

भारी कमाल है और वह कमाल ये है कि वे सोचते हैं कि हमारा कल्याण सिर्फ आत्मिक ही होना चाहिए। हमारा आत्मिक कल्याण होना चाहिए, और कोई बात वे नहीं सोचते।

सहजयोग के लाभ अनेक हैं। आप जानते हैं इस से तन्दरुस्ती अच्छी हो जाएगी, आप को पैसे अच्छे मिल जायेंगे, आप की नौकरी अच्छी हो जाएगी, आप का दिमाग ठीक हो जाएगा, और दुनिया भर की चीजें जिन्हें कि आप संसारी कहते हैं, हो जायेंगी। और उसपर भी आप का नाम हो जाएगा, शोहरत हो जाएगी। जिनको कोई भी नहीं जानता है उनका भी नाम हो जाएगा। उन्हें लोग जानेंगे, सब कुछ होगा। लेकिन हमें क्या चाहिए ? हमें तो अपनी आत्मिक उन्नति के सिवाय और कुछ नहीं चाहिए। हम सिर्फ आत्मिक उन्नति पा लें। जो वह आत्मिक उन्नति मनुष्य में हो जाती है तब मनुष्य सोचता ही नहीं इन सब चीजों को, उस के लिए सब व्यर्थ पदार्थ हैं। सारी लक्ष्मी उसके पैर धोए, उस के लिए वह व्यर्थ पदार्थ है। कोई भी उसके लिए चीज ऐसी नहीं है कि जिसके लिए वो लालायित हो या परेशान हो। इस कदर वह समर्थ हो जाता है। अगर है तो है नहीं है तो नहीं है। मिले तो मिले नहीं है तो नहीं। ये जब अपने अन्दर ये स्थिति आ जाए, मनुष्य इस स्थिति पर आ जाए, तब सोचना चाहिए कि सहजयोगियों ने अपने जीवन में कुछ प्राप्त किया। जब तक ये स्थिति प्राप्त नहीं होती तो आपकी नाव डावांडोल चलती रहेगी और आप हमेशा ही कभी इधर, तो कभी उधर घूमते रहेंगे।

पहली, अपने को स्थापित करने की जो महान शक्ति आपके अन्दर है वो है श्रद्धा। उस श्रद्धा को हृदय

से **जानना चाहिए और उसकी मस्ती में रहना चाहिए, उस के मज़े में आना चाहिए, उसके आनन्द में आना चाहिए। तो जो यह श्रद्धा की आह्लाद दायिनी शक्ति है उस आह्लाद को लेते रहना चाहिए, उस खुमारी में रहना चाहिए। उस सुख में रहना चाहिए। और जब तक मनुष्य उस आह्लाद में पूरी तरह से घुल नहीं जाएगा, उसके सारे जो कुछ भी प्रश्न हैं, समस्यायें हैं, वो बने ही रहेंगे, बने ही रहेंगे, क्योंकि समस्यायें वगैरा सब माया है, ये सब चक्कर** है। अगर किसी से पूछो कि भई तुम्हें क्या समस्या है? तो मुझे सौ रुपया मिलना चाहिए, मुझे पचास रुपये मिलते हैं। जब सौ रुपये मिले, तो फिर क्या समस्या है ? मुझे दो सौ रुपये मिलने चाहिए, तो मुझे सौ ही रुपये मिले। वह तो खत्म ही नहीं हो रहा। फिर दूसरी क्या समस्या है, कि मेरी बीवी ऐसी है। फिर तुम दूसरी बीवी कर लो, वह भी ऐसी है, तीसरी आई वह भी ऐसी है। तो आपकी समस्या नहीं खत्म हो रही क्योंकि आप स्वयं इनको खत्म नहीं कर रहे। ये सब को खत्म करने का तरीका यही है कि अपनी श्रद्धा से आप अपनी आत्मा में जो आनन्द है उस का रस लें और उसी रस के आनन्द में रहें। आखिर सारी चीज है ही हमारे आनन्द के लिए, लेकिन जब तक हम उस रस को लेने की शक्ति ही को नहीं प्राप्त करते हैं तो क्या फायदा होगा ? ये तो ऐसा ही हुआ कि एक मक्खी जा कर बैठ गई फूल पर और कहेगी कि साहब मुझे तो कुछ मधु नहीं मिला। उस के लिए तो मधुकर होना चाहिए। जब तक आप मधुकर नहीं होंगे तो आपको मधु कैसे मिलेगा ? अगर आप मक्खी ही बने रहे तो आप इधर उधर ही भिनकते रहेंगे। लेकिन

जब आप स्वयं मधुकर बन जाएंगे **तो आप कायदे की जगह जा करके, जो आप को रस लेना है, रस ले कर के मजे में पेट भर कर के और आराम से आनन्द से रहेंगे। यही सबसे बड़ी चीज सहजयोग में सीखने की है कि हमारा चित्त पूरी तरह से एक चीज में डूबा रहना चाहिए और वह है आत्मिक हमारी उन्नति होनी चाहिए। पर उस का मतलब यह नहीं कि पूरा समय अपने को बन्धन देते रहो या पूरा समय आँखे बंद कर के और जिसे मराठी में कहते हैं 'शिरडी बाँधु' उस की कोई जरूरत नहीं।** सर्वसाधारण तरीके से, रोजमर्रा के जीवन को कुछ भी न बदलते हुए, जैसे आप हैं वैसे ही उसी दशा में आप को चाहिए कि आप अपने अन्दर जो हृदय में आत्मा है उस के रस को प्राप्त करें। जब उस का रस झरना शुरु हो जाता है तो आप ही में कबीर बैठे हैं और आप ही में नानक बैठे हैं, और आप ही में सारे बड़े–बड़े संत साधु हो गए तुकराम, नामदेव, एकनाथ, सब आप ही लोगों में बैठे हैं। और उन बेचारों को, कोई बताने वाला भी नहीं था, उनके संरक्षण के लिए कोई नहीं था। ये सब आप को प्राप्त है, आप तो अच्छी छत्रछाया में बैठे हुए हैं। तो भी आप उस छत्रछाया में बैठ कर के एक अपनी भी छतरी खोल लेते हैं और उसके बारे में फिर चर्चा करते हैं। तो इस से तो आपकी शक्तियाँ कम हो ही जायेंगी। इस बारे में हमें गौर करना चाहिए कि हमारी कितनी शक्तियाँ है और हमारे अन्दर कितनी शक्तियाँ हमने देखीं और वे कैसे कार्यान्वित हो रही हैं।

आप जो चाहे सो करें। जो आप इच्छा करेंगे वह आप को मिलेगा लेकिन आप की इच्छा ही बदल जाएगी।

आप के तौर तरीके ही बदल जाएंगे, जैसे आज अब कोई महाभारत नहीं देखने को रुकेगा। क्या सोचेगा ? अरे बाप रे, आज माँ का इतना अच्छा समय बँधा हुआ है, माँ स्वयं आ रही हैं, पूजा का मौका है, सारी दुनिया से लोग दौड़े आयेंगे। अब बाहर, अमेरिका से, अभी मैं जा रही हूँ, उन्होंने कहा एक दिवाली पूजा जरूर करना। उस के लिए मेरे ख्याल से सारे ब्रह्माण्ड से लोग वहाँ पहुँच जायेंगे। लेकिन यहाँ कलकत्ते से भी लोगों को आने में मुश्किल हो जाती है, कलकत्ते से भी। और साक्षात् हम बैठे हुए हैं। ऐसे ऐसे लोग हैं कि जो बिल्कुल आसानी से आ सकते हैं। अपने काम के लिए दस मर्तबा दौड़ेंगे। लेकिन इस को नहीं समझते कि कितनी महत्त्वपूर्ण चीज है ? उस का महत्व नहीं समझ पाते क्योंकि श्रद्धा कम है। वह कहते हैं जब हम रिटायर हो जायेंगे तब आयेंगे। सुविधा के साथ। रविवार के दिन करिए, पर एक दिन उससे पहले छुट्टी होनी चाहिए नहीं तो बाद में छुट्टी होनी चाहिए। अब ऐसे रोनी सूरत लोगों के लिए क्या सहजयोग है ? ये घोड़े कहाँ तक जायेंगे ? ये तो खच्चर भी नहीं। जो लोग इस तरह की बातें सोचते हैं, वो सहजयोग में कहाँ तक पहुँचेंगे। यह मेरी समझ में नहीं आता। सब सुविधा होनी चाहिए, शनिवार, इतवार होना चाहिए और उस में से भी हम जैसे ही प्रोग्राम खत्म होगा, भाग जायेंगे, क्योंकि हम को कल दफ्तर में जाना है। तुम जाओगे, कल भी सब ठीक हो जाएगा। लेकिन अगर आप ऐसी जल्दबाजी करोगे तो खंडाला के घाट में आप को रोक लेंगे हम। लेकिन ये सब चुहल, ये सब शैतानियाँ हम कितनी भी करें लेकिन आप के अक्ल में जब तक ये चीज घुसेगी नहीं, क्या फायदा ?

तो चाह रहे हैं कि किसी तरह से आपको रास्ते पर ले आयें। अब रास्ते पर अगर बार–बार आप लोग फिसल पड़े तो कितनी हमें मेहनत करनी पड़ेगी। और आप की जो शक्तियाँ जागृत हो सकती हैं, जो अपने आप पनप सकती हैं, बढ़ सकती हैं वह सारी शक्तियाँ कहाँ से कहाँ नष्ट हो जाएँगी ? तो अपने को पहले आप को संवारना है। अपनी शक्तियों के गौरव में उतरना है और ये जानना है कि हमारे अन्दर कितनी शक्तियाँ हैं और हम कितनी शक्तियों को प्राप्त कर सकते हैं ? हम कितने ऊँचे उठ सकते हैं, हम क्या–क्या लाभ दूसरों को दे सकते हैं। इतना भंडारा हमारे अन्दर पड़ा हुआ है। सारा कुछ खुल गया, चाबी मिल गई। अब खुल जाने पर सिर्फ उसमें से निकाल के लोगों को बाँटना है और उस का मज़ा उठाना है। आज ये जो शक्ति की पूजा हो रही है वो असल में, मैं चाहती हूँ कि आप जानिए कि आप की ही शक्ति की पूजा होनी चाहिए। जिस से आप एक बड़े ईमानदार और एक सच्चे तरीके से श्रद्धामय हो जायें। साधु संतों को कुछ कहना नहीं पड़ता था। वो मार खायेंगे, पीटे जायेंगे, उन को जहर देंगे, चाहे कुछ करिए उन की लगन नहीं छूटती। अब आप लोगों को तो कनेक्शन लगा दिया लेकिन वह इतना ढीला कनेक्शन है कि बार–बार, लगाना पड़ता है। फिर से किसी बात से छूट जाता है। फिर से किसी बात से लगाना पड़ता है। सो अब सोचना यह है आप को कि अपने अन्दर की सारी ही शक्तियाँ हमें जागृत करनी हैं। तो फिर कोई कमी नहीं रह जाएगी। कोई आप के सामने प्रश्न ही नहीं रह जायेंगे। **इन शक्तियों का जागृत करना बहुत आसान है। एक ही बात है कि आप की लगन**

होनी चाहिए। जिसको लगन हो जाएगी, जो पूरी तरह से लगन से सहज योग में उतरेगा और जिसका हमेशा जी सहजयोग में ही खिंचा रहेगा, उधर ही ध्यान रहेगा उसका तो क्षेम हो ही जाएगा। पर पहले योग घटित होना चाहिए, और आधा अधूरा योग किसी काम का नहीं। न इधर के रहे न उध्र के रहे। ऐसी हालत हो जाएगी। एक छोटे से बीज में हजारों वृक्ष निर्माण करने की शक्ति है। तो आप तो ऐसे हजारो वृक्षों के मालिक मनुष्य हैं और उन में से हजारों लोगों को शक्तिशाली बनाने की शक्ति आप के अन्दर है। लेकिन अग़र इस बीज का अंकुर निकालने के बाद अगर आप रास्ते पर फेंक दीजिए और इसकी परवाह न करें, और इसका अग़र पेड़ नहीं हुआ तो इसकी शक्ति कुंठित हो जाएगी। तो अपने लिए पूरी तरह से आप इसका अंदाज करें कि हम क्या हैं और हम क्या कर रहे हैं ? और कहाँ तक हम पहुँच सकते हैं ? इससे आपस के झगड़े छोटी–छोटी क्षुद्र बातें, ऐसी चीजें जो कि रास्ते पर के भी लोग न करें, असभ्यता, ये तो अपने आप से ही ढह जाएगी। वे तो बचने ही नहीं वाली। लेकिन आप का जो स्वयं सुन्दर स्वरूप है वो निखर आएगा। और लोग कहेंगे कि ये एक शक्तिशाली मनुष्य खड़ा हुआ है। एक विशेष स्वरूप का आदमी खड़ा हुआ है। एक महान कोई व्यक्ति है। ऐसा अनूठा उसका व्यवहार है। वो किसी से डरता नहीं, निर्भय है। जहाँ कहना है कहता है, जहाँ नहीं कहना नहीं कहता। ये आ जाए, बाबा भी आ जाएं फिर बाबा के नाना भी आ जाए सो नहीं हो सकता। जो आप हैं उस लायक वे लोग नहीं। वे नालायक हैं। जो नालायक

हैं उनको छोड़ देना चाहिए। उससे क्यों झगड़ा करना ? नालायक लोगों से झगड़ा करने की कोई जरूरत नहीं। नसीब आप के फूटे जो नालायक से शादी कर ली। ऐसा सोचना चाहिए। और नसीब आप के फूटे जो नालायक आप के माँ बाप हैं। जो नालायक हैं उनको काहे को जबरदस्ती सहजयोग में लाना और मेरी खोपड़ी पर लादना, कि माँ इसको ठीक करो। क्योंकि वह मेरी बीवी है, क्योंकि वह मेरा बाप है, क्योंकि मेरा बाबा, मेरा दादा। मेरा उनसे कोई रिश्ता नहीं बनता। अग़र वे सहजयोग में नहीं हैं तो उनको आप नालायकों को बाहर रखिए। जो लायक लोग हैं उन से रोज दोस्ती करिए, उन के मज़े में रहिए। आप को जरूरत क्या है ? यह यही बात हम लोग नहीं समझ पाते कि दुनियादारी, ये रिश्ते ऐसे चलते रहते हैं। इसमें कुछ रखा नहीं, हाँ अग़र आपकी जिनके साथ में संगति है, वो आप के साथ उठ सकते हैं, आप के साथ चल सकते हैं, आप के साथ बन सके तो ठीक है। और नहीं तो ऐसे नालायक लोगों को कोई जरूरत नहीं सहजयोग में लाने की। मैं देखती हूँ कि बहुत ही नालायक लोग सहजयोग में कभी कभी इस रिश्ते से आ जाते हैं और मेरा बड़ा सिर दर्द हो जाता है। आप की लियाकत थी इस लिए आप आए और आप सहजयोग को प्राप्त हुए। आप को आशीर्वाद मिला। आप ने बहुत कुछ पा लिया और आगे आप पा सकते हैं। और जो भिखारी भी हैं और उस की झोली में छेद भी है, उन को और देने का क्या फायदा ? लो करेला नीम चढ़ा। ऐसे लोगों से रिश्ता रखने की आप को कोई जरूरत नहीं है। उन से कोई बात करने की जरूरत नहीं। मतलब रखने की जरूरत नहीं है। उनको बकने दीजिए। अग़र उनका दिमाग ठीक

हुआ तो वे आयेंगे और सहजयोग में उतरेंगे, और नहीं हुए तो आप अपना दिमाग क्यों खराब करते हैं ? उस से कोई फायदा नहीं है। ऐसे लोगों के पत्थर के जैसे सिर होते हैं। उस से कोई फायदा नहीं होता, वे देख ही नहीं सकते।

तो आज से हम लोगों को सोचना है कि हम एक व्यक्ति हैं, स्वयं, और हमने प्राप्त किया है अपने पूर्वजन्म के कर्मों से, क्योंकि हमने बहुत पुण्य किये थे। इसलिए हम आज इस स्थान पर बैठे हुए हैं, और इससे भी ऊँचे स्थान पर हम बैठ सकते हैं और जा सकते हैं। तो अपने पीछे में बड़े–बड़े इस तरह के पत्थर लगा कर के आप समुद्र में मत कूदिए। आप को अग़र तैरना आता है तो मुक्त हो कर के तैरिए। उसका आनन्द उठाईए और अपनी सारी शक्तियों से आप प्लावित होइए। आज मेरा अनन्त आशीर्वाद है कि आप की सुप्त सारी ही शक्तियाँ जागृत हों और धीरे–धीरे आप इनको महसूस करें और उसकी जो अन्दर से प्रवाह की विशेष धारायें बहें उसके अन्दर आप आनन्द लूटें।

आप सबको अनन्त आशीर्वाद

सप्तमी – नवरात्रि, 17–10–1988

श्री देव्यथर्वशीर्षम्

ॐ सर्वे वै दैवा देवीमुपतस्थुः कासि त्वं महादेवीति ।। 1।।

साब्रवीत् –अहं ब्रह्मस्वरुपिणी। मत्तः प्रकृतिपुरुषात्मकं जगत्। शून्यं चाशून्यं च।। 2।।

अहमानन्दानानन्दौ। अहं विज्ञानाविज्ञाने अहंब्रह्मब्रह्मणी वेदितव्ये।

अहं पच्चभूतान्यपच्चभूतानि। अहमखिलं जगत्।। 3।।

ॐ सभी देवता देवी के समीप और नम्रता से पूछने लगे – हे महादेवि। आप कौन हो ।। 1।।

उन्होंने कहा–मैं ब्रह्मस्वरूप हूँ। मुझसे प्रकृति पुरूषात्मक सद्रूप और असद्रूप जगत उत्पन्न हुआ है ।। 2।।

मैं आनन्द और अनानन्दरूपा हूँ। मैं विज्ञान और अविज्ञान रूपा हूँ। अवश्य जानने योग्य ब्रह्म और अब्रह्म भी मैं ही हूँ। पंचीकृत और अपंचीकृत महाभूत भी मैं ही हूँ। यह सारा दृश्य–जगत मैं ही हूँ ।। 3।।

वेदोऽहमवेदोऽहम्। मविद्याहम् अजाहमनजाहम्। अधश्चोर्ध्वं च तिर्यक्चाहम् ।। 4।।

अहं रूद्रेभिर्वसुभिश्चरामि। अहमादित्यैरुत विश्वदेवैः।

अहं मित्रावरुणावुभौ बिभर्मि। अहमिन्द्राग्नी अहमश्विनावुभौ।। 5।।

अहं सोमं त्वष्टारं पूषणं भगं दधामि।

अहं विष्णुमुरुक्रमं ब्रह्माणमुत प्रजापतिं दधामि।। 6।।

वेद और अवेद मैं हूँ। विद्या और अविद्या भी मैं, अजा और अनजा (प्रकृति और उससे भिन्न) भी मैं हूँ, नीचे–ऊपर, अगल–बगल भी मैं ही हूँ।।4।।

मैं रुद्रों और वसुओं के रूप में संचार करती हूँ। मैं आदित्यों और विश्वेदेवों के रूपों में फिरा करती हूँ। मैं मित्र और वरुण दोनों का , इन्द्र एवं अग्निका और दोनों अश्विनी कुमारों का भरण–पोषण करती हूँ ।। 5।।

मैं सोम, त्वष्टा, पूषा और भग को धारण करती हूँ। त्रैलोक्य को आक्रान्त करने के लिए विस्तीर्ण पादक्षेप करने वाले विष्णु, ब्रह्मदेव और प्रजापति को मैं ही धारण करती हूँ ।। 6।।

अहं दधामि द्रविणं हविष्मते सुप्राव्ये यजमानाय सुन्वते।
अहं राष्ट्री संगमनी वसूनां चिकितुषी प्रथमा यज्ञियानाम्।
अहं सुवे पितरमस्य मूर्धन्मम योनिरप्स्वन्तः समुद्रे।
य एवं वेद। स दैवी सम्पदमाप्नोति।। 7।।

देवों को उत्तम हवि पहुँचाने वाले और सोमरस निकालने वाले यजमान के लिए हविर्द्रव्यों से युक्त धन धारण करती हूँ। मैं सम्पूर्ण जगत की ईश्वरी, उपासकों को धन देने वाली, ब्रह्मरूप और यज्ञाहों में (यजन करने योग्य देवों में) मुख्य हूँ। मैं आत्मस्वरूप पर आकाशादि निर्माण करती हूँ। मेरा स्थान आत्मस्वरूप को धारण करने वाली बुद्धिवृत्ति में है। जो इस प्रकार जानता है, वह दैवी सम्पत्ति लाभ करता है ।। 7।।

ते देवा अब्रुवन् – नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सततं नमः।
नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणताः स्म ताम्।। 8।।

तब उन देवों ने कहा, देवी को नमस्कार है। बड़े बड़ों को अपने–अपने कर्तव्य में प्रवृत्त करने वाली कल्याणीकर्त्री को सदा नमस्कार है। गुणसाम्यावस्थारूपिणी मंगलमयी देवी को नमस्कार है। नियमयुक्त होकर हम उन्हें प्रणाम करते हैं ।। 8।।

तामग्निवर्णां तपसा ज्वलन्तीं वैरोचनीं कर्मफलेषु जुष्टाम्।
दुर्गां देवीं शरणं प्रपद्यामहेऽसुरान्नाशयित्र्यै ते नमः।। 9।।

उन अग्नि से वर्णवाली, ज्ञान से जगमगाने वाली, दिप्तिमती, कर्मफल–प्राप्ति के हेतु सेवन की जाने वाली दुर्गादेवी की हम शरण में हैं। असुरों का नाश करने वाली देवी! आपको नमस्कार है ।। 9।।

देवी वाचमजनयन्त देवा स्तां विश्वरूपाः पशवो वदन्ति
सा नो मन्द्रेषमूर्जं दुहाना धेनुर्वागस्मानुप सुष्टुतैतु ।। 10।।

प्राणरूप देवों ने जिस प्रकाशमान वैखरी वाणी को उत्पन्न किया, उसको अनेक प्रकार के प्राणी बोलते हैं। वह कामधेनुतुल्य आनन्ददायक और अन्न तथा बल देने वाली वाग्रूपिणी भगवती उत्तम स्तुति से सन्तुष्ट होकर हमारे समीप आयें ।। 10।।

कालरात्रीं ब्रह्मस्तुतां वैष्णवीं स्कन्दमातरम्।
सरस्वतीमदितिं दक्षदुहितरं नमामः पावनां शिवाम्।। 11।।

काल का भी नाश करने वाली, वेदों द्वारा स्तुत हुई विष्णुशक्ति, स्कन्दमाता (शिवशक्ति), सरस्वती (ब्रह्मशक्ति) देवमाता अदिति और दक्ष कन्या (सती), पाप–नाशिनी कल्याणकारिणी भगवती को हम प्रणाम करते हैं ।। 11।।

महालक्ष्म्यै च विद्महे सर्वशक्त्यै च धीमहि।

तन्नो देवी प्रचोदयात् ।। 12।।

हम महालक्ष्मी को जानते हैं और उन सर्वशक्ति रूपिणी का ही ध्यान करते हैं। वह देवी हमें उस विषय में (ज्ञान– ध्यान में) प्रवृत्त करें ।। 12।।

अदितिर्ह्यजनिष्ट दक्ष या दुहिता तव।

तां देवा अन्वजायन्त भद्रा अमृतबन्धवः।।13।।

हे दक्ष! आपकी जो कन्या अदिति है, वह प्रसूता हुई और उनके मृत्युरहित कल्याणमय देव उत्पन्न हुए ।। 13।।

कामो योनिः कमला वज्रपाणिर्गुहा हसा मातरिश्वाभ्रमिन्द्रः

पुनर्गुहा सकला मायया च पुरुच्यैषा विश्वमातादिविद्योम् ।। 14।।

काम (क), योनि (ए), कमला (ई), वज्रपाणि–इन्द्र (ल), गुहा (ह्रीं)। ह, स–वर्ण, मातरिश्वा–वायु (क), अभ्र (ह), इन्द्र (ल), पुनः गुहा (ह्रो)। स,क, ल –वर्ण, और मया (ह्री), यह सर्वात्मिका जगन्माता की मूल विद्या है और यह ब्रह्मरूपिणी है ।। 14।।

एषाऽऽत्मशक्तिः। एषाःविश्वमोहिनी।

पाशांकुशा धनुर्बाण धरा। एषा श्रीमहाविद्या। य एवं वेद स शोकं तरति।।15।।

ये परमात्मा की शक्ति हैं। ये विश्वमोहिनी है। पाश, अंकुश, धनुष और बाण धारण करने वाली हैं। ये 'श्रीमहाविद्या' हैं। जो ऐसा जानता है वह शोक को पार कर जाता है ।। 15।।

नमस्तेऽस्तु भगवति मातरस्मान् पाहि सर्वतः।। 16।।

भगवती! आपको नमस्कार है। माता! सब प्रकार से हमारी रक्षा करें ।। 16।।

सैषाष्टौ वसवः। सैषैकादश रुद्राः। सैषाद्वादशादित्याः।

सैषा विश्वेदेवाः सोमपा असोमपाश्च। सैषा यातुधाना असुरा रक्षांसि पिशाचा यक्षाः सिद्धाः।

सैषा सत्त्वरजस्तमांसि। सैषा ब्रह्माविष्णुरुद्ररुपिणी।

सैषा प्रजापतीन्द्रमनवः। सैषा ग्रहनक्षत्रज्योतींषि।

कला काष्ठादिकालरूपिणी। तामहं प्रणौमि नित्यम्।।

पापापहारिणीं देवीं भुक्तिमुक्तिप्रदायिनीम्।

अनन्तां विजयां शुद्धां शरण्यां शिवदां शिवाम् ।। 17।।

(मन्त्रद्रष्टा ऋषि कहते हैं) वही ये अष्ट वसु हैं; वही ये एकादश रुद्र हैं, वही ये द्वादश आदित्य हैं, वही ये सोमपान करने वाले और न करने वाले विश्वेदेव हैं; वही ये यातुधान (एक प्रकार के राक्षस), असुर, राक्षस, पिशाच, यक्ष और सिद्ध हैं, वही ये सत्व, रज, तम हैं, वही ये ब्रह्माविष्णु–रुद्ररूपिणी हैं; वही ये प्रजापति–इन्द्र मनु हैं; वही ये ग्रह, नक्षत्र और तारे हैं, वही कला काष्ठादि काल–रूपिणी हैं; पान नाश करने वाली, भोग–मोक्ष देनेवाली, अन्तरहित, विजयाधिष्ठात्री, निर्दोष, शरण लेने योग्य, कल्याणदात्री और मंगलरूपिणी उन देवी को हम सदा प्रणाम करते हैं ।। 17।।

वियदीकारसंयुक्तं वीतिहोत्र समन्वितम्।
अर्धेन्दुलसितं देव्या बीजं सर्वार्थसाधकम्।। 18।।
एवमेकाक्षरं ब्रह्म यतयः शुद्धचेतसः।
ध्यायन्ति परमानन्दमया ज्ञानाम्बुराशयः।।19।।

वियत–आकाश (ह) तथा 'ई' कार से युक्त, वीतिहोत्र–अग्नि (र) सहित, अर्धचन्द्र (ँ) से अलंकृत जो देवी का बीज है, वह सब मनोरथ को पूर्ण करने वाला है। इस प्रकार इस एकाक्षर ब्रह्म (ह्रीं) का ऐसे यदि ध्यान करते हैं, जिनका चित्त शुद्ध है, जो निरतिश्यानन्दपूर्ण हैं और जो ज्ञान के सागर हैं। (यह मन्त्र देवी प्रणव माना जाता है। ॐकार

के समान ही यह प्रणव भी व्यापक अर्थ से भरा हुआ है। संक्षेप में इसका अर्थ इच्छा–ज्ञान–क्रिया–धार,अद्वैत, अखण्ड, सच्चिदानन्द समरसीभूत शिव–शक्ति स्फुरण है।) ।।18–19।।

वाङ्माया ब्रह्मसूस्तस्मात् षष्ठं वक्त्रसमन्वितम्।
सूर्योऽवाम् श्रोत्रबिन्दु संयुक्तष्टात्तृतीयकः।
नारायणेन संमिश्रो वायुश्चाधरयुक् ततः।
विच्चे नवार्णकोऽर्णः स्यान्महदानन्ददायकः ।। 20।।

वाणी (ऐं), माया (ह्रीं), ब्रह्मसू–काम (क्लीं), इसके आगे छठा व्यंजन अर्थात् च, वही वक्त्र अर्थात् आकार से युक्त (चा), सूर्य (म), 'अवाम श्रोत्र' –दक्षिण कर्ण (उ) और बिन्दु अर्थात् अनुस्वार से युक्त (मुं), टकार से तीसरा ड, वही नारायण अर्थात् 'आ' से मिश्र (डा), वायु (य), यही अधर अर्थात् 'ऐ' से युक्त (यै) और ''विच्चे'' यह नवार्णमन्त्र उपासकों को आनन्द और ब्रह्मसायुज्य देने वाला है ।। 20।।

[इस मन्त्र का अर्थ है– हे चित्स्वरूपिणी महासरस्वती! हे सद्रूपिणी महालक्ष्मी! हे आनन्द–रूपिणी महाकाली! ब्रह्मविद्या पाने के लिए हम हर समय आपका ध्यान करते हैं। हे महाकाली–महालक्ष्मी–महासरस्वतीस्वरूपिणी चण्डिके! आपको नमस्कार है। अविद्यारूप रज्जु की दृढ़ ग्रन्थि को खोलकर मुझे मुक्त करें।]

हृत्पुण्डरीकमध्यस्थां प्रातः सूर्यसमप्रभाम्।
पाशाङ्कुशधरां सौम्यां वरदाभयहस्तकाम्।
त्रिनेत्रां रक्तवसनां भक्तामदुघां भजे ।। 21।।

हृत्कमल के मध्य में रहने वाली, प्रातःकालनी सूर्य के समान प्रभावाली, पाश और अंकुश धारण करने वाली, मनोहररूपवाली, वरद और अभयमुद्रा धारण किए हुए हाथोंवाली, तीन नेत्रों से युक्त, रक्तवस्त्र परिधान करने वाली और कामधेनु के समान भक्तों के मनोरथ पूर्ण करने वाली देवी को मैं भजता हूँ ।। 21।।

नमामि त्वां महादेवीं महाभयविनाशिनीम्।
महादुर्गप्रशमनीं महाकारूण्यरूपिणीम् ।। 22।।

महाभय का नाश करने वाली, महासंकट को शान्त करने वाली और महान् करुणा की साक्षात् मूर्ति आप महादेवी को मैं नमस्कार करता हूँ ।। 22।।

यस्याः स्वरूपं ब्रह्मादयो न जानन्ति तस्मादुच्यते अज्ञेया।
यस्या अन्तो न लभ्यते तस्मादुच्यते अनन्ता।
यस्या लक्ष्यं नोपलक्ष्यते तस्मादुच्यते अलक्ष्या।
यस्या जननं नोपलभ्यते तस्मादुच्यते अजा।
एकैव सर्वत्र वर्तते तस्मादुच्यते एका।
एकैव विश्वरूपिणी तस्मादुच्यते नैका।
अत एवोच्यते अज्ञेयानन्तालक्ष्याजैका नैकेति ।। 23।।

जिसका स्वरूप ब्रह्मादिक नहीं जानते–इसलिए जिसे अज्ञेया कहते हैं, जिसका अंत नहीं मिलता–इसलिए जिसे अनन्ता कहते हैं, जिसका लक्ष्य दिखाई नहीं पड़ता–इसलिए जिसे अलक्ष्या कहते हैं, जिसका जन्म समझ में नहीं आता–इसलिए जिसे अजा कहते हैं, जो अकेली ही सर्वत्र हैं–इसलिए जिसे एका कहते हैं, जो अकेली ही विश्वरूप में सजी हुई हैं–इसलिए जिसे नैका कहते हैं, वह इसलिए अज्ञेया, अनन्ता, अलक्ष्या, अजा, एका और नैका कहलाती हैं ।। 23।।

मन्त्राणां मातृकादेवी शब्दानां ज्ञानरूपिणी।
ज्ञानानां चिन्मयातीता शून्यानांशून्यसाक्षिणी
यस्याः परतरं नास्ति सैषा दुर्गा प्रकीर्तिता ।। 24।।

सब मन्त्रों में 'मातृका' – मूलाक्षररूप से रहने वाली, शब्दों में ज्ञान (अर्थ) रूप से रहने वाली, ज्ञानों में 'चिन्मयातीता'', शून्यों में शून्यसाक्षिणी तथा जिनसे और कुछ भी श्रेष्ठ नहीं है, वे दुर्गा नाम से प्रसिद्ध हैं ।। 24।।

तां दुर्गा दुर्गमां देवीं दुराचारविघातिनीम्।
नमामि भवभीतोऽहं संसारार्णवतारिणीम् ।। 25 ।।

उन दुर्विज्ञेय, दुराचारनाशक और संसारसागर से तारने वाली दुर्गा देवी को भवसागर से डरा हुआ मैं नमस्कार करता हूँ ।। 25।।

इदमथर्वशीर्षं योऽधीते सपश्चाथवशीर्षजपफलमाप्नोति।
इदमथर्वशीर्षमज्ञात्वा योऽर्चां स्थापयति –शतलक्षं प्रजप्त्वापि सोऽर्चासिद्धिं न विन्दति।
शतमष्टोत्तरं चास्य पुरश्चर्याविधिः स्मृतः।

इस अथर्वशीर्ष का जो अध्ययन करता है, उसे पाँचों अथर्वशीर्षों के जप का फल प्राप्त होता है। इस अथर्वशीर्ष को न जानकर जो प्रतिमास्थापन करता है, वह सैकड़ों लाख जप करके भी अर्चासिद्धि नहीं प्राप्त करता। अष्टोत्तरशत (108 बार) जप (इत्यादि) इसकी पुरश्वरणविधि है।

सप्तमी के दिन

देवी अथर्वशीर्ष के श्लोक दुर्गासप्तशती से पढ़े गए। इन श्लोकों में देवी अपने विषय में बताती हैं। बीच–बीच में श्रीमाताजी ने श्लोकों के अर्थों को स्पष्ट किया और इनकी व्याख्या की। ये इस प्रकार है :–

* जब आप किसी को आनन्द प्रदान करते हैं आनन्द का स्रोत, आनन्दातीत होना चाहिए।
* मैं ज्ञान की दाता हूँ।
* आत्मा के प्रकाश के बिना किस प्रकार आप किसी चीज का ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं।
* आप देखें की स्रोत अजन्मा है, यह जन्म ले सकता है क्योंकि यह अनादि है अतः यह अजन्मा है। अनादि तो है ही यह पूर्ण है परन्तु पूर्ण भी जन्म ले सकता है।
* क्यों न आत्म–साक्षात्कार पा लें इसके बिना देवी पूजा करने का क्या लाभ है ? आत्मा के ज्ञान के बिना आप यदि कोई पूजा करते हैं तो इसका क्या लाभ है ? आपको परमेश्वरी आशीष नहीं प्राप्त होगा। यह बात हजारों वर्ष पूर्व कही जा चुकी है।

* वैखरी वह शक्ति है जिसके माध्यम से हम बोलते हैं।

* आप किसी भी देवी–देवता का नाम लें और पूछें, ''श्री माताजी क्या आप यह देवी–देवता हैं ?'' चैतन्य बहने लगता है क्योंकि इन देवी–देवताओं की शक्ति ही इनका सार–तत्व है, क्योंकि मैं ही वह शक्ति हूँ, इसलिए आपको चैतन्य लहरियाँ आती हैं। किसी का नाम लेकर आप पूछें, चाहे सन्तों, ऋषियों और महर्षियों का नाम लेकर पूछें। वह सब मैं ही हूँ। श्लोक में यही बताने का प्रयत्न किया गया है।

* बीज–मंत्र का अर्थ है ''वैखरी'' –वैखरी अर्थात् 'वाक् शक्ति'। जिन लोगों को आत्म–साक्षात्कार की शक्ति प्राप्त हो जाती है वे वाक्–शक्ति को मंत्र बना लेते हैं। अतः जब उन्हें अपने चक्रों को सुधारना होता है, या अपने दाएँ–बाएँ को सुधारना होता है तो उन्हें बीज मंत्र कहने पड़ते हैं। जब वह बीज–मंत्र कहते हैं तो उस भाग को बीज प्राप्त होता है। बीज को अंकुरित होकर बढ़ना होता है। अतः प्रथम स्थान पर उन्हें बीज मंत्र कहना पड़ता है और तत्पश्चात् उन्हें भिन्न चक्रों के भिन्न मंत्र कहने पड़ते है। तो एक तो बीज है और फिर वृक्ष। अतः सबसे पहले यदि आप बीज को जान लें तो आप इस मंत्र को कहते हुए अपने अन्दर बीजारोपण कर लेते हैं। इसके बाद आप अन्य सभी मंत्र कहने लगते हैं। अतः इस प्रकार से आप इसे बढ़ाते हैं।

'संस्कृत' शब्द का उद्भव कुण्डलिनी की गति से होता है, जब उसमें से आवाज निकलती है। ये

सब चीजें महान ऋषियों ने लिख दी थीं और इसी प्रकार से सभी चक्रों के भी उनकी पंखुडियों की संख्या के अनुसार स्वर एवं व्यंजन होते हैं। आप कह सकते हैं कि उनमें जो पंखुड़ियाँ होती हैं उनके अनुसार वे संस्कृत भाषा की वर्णमाला बनाते हैं। संस्कृत को पावन बनाया गया है।

यह भाषा पावन बनाई गई। सर्वप्रथम केवल एक ही भाषा थी। उसके अन्दर से दो भाषाओं ने जन्म लिया एक लैटिन भाषा थी और जिसे पावन किया गया वह संस्कृत थी। ये संस्कृत भाषा ऋषियों की देन है, उन ऋषियों की जिन्होंने अपने अन्दर ये सब चीजें सुनीं और इसे बनाया। यह 'वैखरी' की शक्ति है। अब इसकी लिपि ''वैखरी''है। अब शक्ति भी है और यंत्र भी है परन्तु इसे दिव्य बनाने के लिए आपको इसे मंत्र रूप देना होगा और मंत्र बनाने के लिए, जो भी मंत्र आप चाहते हैं पहले उसका बीज मंत्र जानना होगा। यदि आप अपनी कुण्डलिनी उठाना चाहते हैं तो इसका बीज मंत्र है रीं। रीं से आप इस प्रकार मंत्र बना सकते हैं:

'' ॐ त्वमेव साक्षात् श्री रीं साक्षात् ..... ''इसी प्रकार से आप देवी–देवताओं के मंत्र कहते चले जाएं।

* आप सब अब विद्वान बन गए हैं। अब आप यह समझने का प्रयत्न करें कि किस प्रकार यह विद्या आपके अन्दर शनैः शनैः समाती चली जा रही है। आपके सम्मुख कोई अध्यापक या कोई अन्य छड़ी पकड़ कर नहीं बैठा हुआ।

आपके अन्दर से और बाहर से पूरी विद्या प्रकट हो रही है। मैं जो भी कहती हूँ उसे आप अपनी चैतन्य लहरियों द्वारा जाँच सकते हैं। तो यह विद्या आपके हाथों में समाती है। आप इसे इसलिए स्वीकार नहीं करते कि मैं इस बात को कह रही हूँ , आप इसे इसलिए स्वीकार करते हैं क्योंकि यही सत्य है। इसी कारण से स्वीकार करते हैं। मान लो मैं कहती हूँ कि यह जल है तो क्या ? आप इसे पीयेंगे और देखेंगे कि यदि यह प्यास बुझाता है केवल तभी आप विश्वास करते हैं कि यह जल है अन्यथा आप विश्वास नहीं करते। यह भी ऐसे ही है।

* हम ''स्वयं सिद्ध'' हैं।
* 'रा' राधा शक्ति है। जो शक्ति को धारण करती है वह राधा है। वे महालक्ष्मी हैं और यही कारण है कि वे कुण्डलिनी को संभालती हैं।
* 'ई' आद्या माँ हैं और 'र' शक्ति हैं जो कुण्डलिनी हैं। अतः 'रीं' का अर्थ है कि आपके अन्दर महालक्ष्मी तत्व से गुजरकर आने वाली शक्ति है जो कि 'रा' है।

आप देखें की ऊर्जा इस मार्ग से गुजरती हुई आदिशक्ति की ओर बढ़ती है। अतः 'रीं' क्योंकि योगीजन केवल एक–तार (योग) होने में विश्वास करते हैं। वे उसके जाप करते हैं। योगी योग में विश्वास करते हैं। अतः उन्हें शक्ति की तथा आदिशक्ति की भी देखभाल करनी होती है। यह बात बहुत महत्वपूर्ण है

क्योंकि शक्ति को इसी प्रकार से होना चाहिए, वह कुण्डलिनी हो या आद्या माँ। चौदह हजार वर्ष पूर्व ऋषियों ने यह सब कुछ लिखा था और यह अक्षरशः सत्य है और आप इसे जानते हैं। अब आप ये पुस्तक (देवी सप्तशती) पढ़ेंगे तो आप समझ जायेंगे।

* चित्तस्वरूपिणी दाईं ओर महासरस्वती हैं फिर सत्वस्वरूपिणी महालक्ष्मी हैं। आनन्दरूपिणी महाकाली हैं। आप सब ये बातें जानतें हैं।

(ब्रह्मज्ञान प्राप्त करने के लिए हम सदैव आपका ध्यान करते हैं)

उसके बिना ही आपने प्राप्त कर लिया है। बिना ध्यान धारणा किए ही आपने आत्म–साक्षात्कार पा लिया है। अब आप अवश्य ध्यान करें। मैं नहीं जानती कि इसके विषय में क्या किया जाए।

साक्षी अवस्था में आप शून्य बन जाते हैं। साक्षी अवस्था में आपका 'मैं' अहम् शेष नहीं रह जाता। आप मात्र अन्दर देखें और यह 'शून्य' हो जाता है। तो जब आप शून्य अवस्था में होते हैं तो शक्ति कौन हैं ? ये वही हैं। आप निर्विचार अवस्था में हैं। हजारों लोगों ने निर्विचार अवस्था प्राप्त की। अब उन्होंने ये प्राप्त कर लिया है। तो कौन जानता है ? मैं जानती हूँ कि आपकी कुण्डलिनी जागृत हुई कि नहीं, आपको चाहे इस बात का पता न हो परन्तु मैं इस बात को जानती हूँ। अतः केवल वे ही आपकी सारी अवस्थाओं को जानती हैं।

अतः आप सारे विचार को कम्प्यूटर की तरह से समझ सकते हैं। इसे पहले से ही कितना अच्छी तरह से बनाया गया है कि यह घटित होने वाली हर चीज को अपने अंदर अंकित कर लेता है। जैसे, मैं आपसे बात कर रही हूँ अचानक कोई व्यक्ति बैठा हुआ है और मैं कहती 'हूँ' 'हाँ'। अतः मेरा चित्त वहाँ भी है। मैं आपसे बातचीत कर रही हूँ, चित्त वहाँ है और तुरन्त कुण्डलिनी उठती है। कार्य इस प्रकार होते रहते है।

अष्टमी – नवरात्रि, 18–10–1988

एकादशोऽध्याय : (देवीमहात्म्य)

महालक्ष्मी श्लोकाः

बालरविद्युतिमिन्दुकिरीटां तुंगकुचां नयनत्रयुक्ताम्।
स्मेरमुखीं वरदाङ्कुशपाशाभीतिकरां प्रभजे भुवनेशीम् ।।

मैं भुवनेश्वरी देवी का ध्यान करता हूँ। उनके श्री अंगो की आभा प्रभातः काल के सूर्य के समान है। मस्तक पर चन्द्रमा का मुकुट है। वे उभरे हुए स्तनों और तीन नेत्रों से युक्त हैं। उनके मुख पर मुस्कान की छटा छायी रहती है और हाथों में वरद, अंकुश, पाश एवं अभय मुद्रा शोभा पाते हैं।

ऊँ ऋषिरूवाच।।1।।

देव्या हते तत्र महासुरेन्द्रे, सेन्द्रा सुरा वह्निपुरोगमास्ताम्।
कात्यायनीं तुष्टुवुरिष्ट लाभाद् विकाशिवक्त्राब्ज विकाशिताशाः ।। 2।।

ऋषि कहते हैं :– ।।1।।

देवी के द्वारा वहाँ महादैत्यपति शुम्भ के मारे जाने पर इन्द्र आदि देवता अग्नि को आगे करके उन कात्यायनी देवी की स्तुति करने लगे। उस समय अभीष्ट की प्राप्ति होने से उनके मुख कमल दमक उठे थे और उनके प्रकाश से दिशायें भी जगमगा उठी थीं।।2।।

देवि प्रपन्नार्तिहरे प्रसीद, प्रसीद मातर्जगतोऽखिलस्य।
प्रसीद विश्वेश्वरि पाहि विश्वं, त्वमीश्वरी देवि चराचरस्य ।। 3।।

देवता बोले–शरणागत की पीड़ा हरने वाली देवि! हम पर प्रसन्न होइए। संपूर्ण जगत की माता प्रसन्न होइए। विश्वेश्वरी! विश्व की रक्षा करें। देवि! आपही चराचर जगत की अधीश्वरी हो ।। 3।।

आधार भूता जगतस्त्वमेका महीस्वरूपेण यतः स्थितासि।
अपां स्वरूपस्थितया त्वयैतदाप्यायते कृत्स्नमलंघ्यवीर्ये।।4।।

आप इस जगत का एक मात्र आधार हो, क्योंकि पृथ्वी रूप में आपकी ही स्थिति है। देवि! आपका पराक्रम अलंघनीय है। आपही जलरूप में स्थित होकर संपूर्ण जगत को तृप्त करती हो ।। 4।।

त्वं वैष्णवी शक्तिरनन्तवीर्या विश्वस्य बीजं परमासि माया।
सम्मोहितं देवि समस्तमेतत् त्वं वै प्रसन्ना भुवि मुक्ति हेतुः ।। 5।।

आप अनन्त बलसंपन्न वैष्णवी शक्ति हो। इस विश्व की कारणभूता परामाया हो। देवि! आपने इस समस्त जगत को मोहित कर रखा है। आप ही प्रसन्न होने पर इस पृथ्वी पर मोक्ष की प्राप्ति कराती हो ।।5।।

विद्याः समस्तास्तव देवि भेदाः स्त्रियः समस्ताः सकला जगत्सु।
त्वयैकया पूरितम्बयैतत् का ते स्तुतिः स्तव्यपरा परोक्तिः ।। 6।।

देवि सम्पूर्ण विद्यायें आपके ही भिन्न–भिन्न स्वरूप हैं। जगत् में जितनी स्त्रियाँ हैं, वे सब आपका ही स्वरूप हैं। जगदम्ब! एकमात्र आपने ही इस विश्व को व्याप्त कर रखा है। आप सभी तरह की प्रशंसा से परे परावाणी (वाणी का सूक्ष्म, उच्चतम स्वरूप) हो, अतः कौन सी प्रशंसा आप के लिए वास्तव में उपयुक्त है ?।। 6।।

सर्वभूता यदा देवी स्वर्गमुक्तिप्रदायिनी,

त्वम् स्तुता स्तुतये का वा भवन्तु परमोक्तयः ।। 7।।

जब 'सर्वस्वरूपा देवी एवं स्वर्ग तथा मोक्ष प्रदान करने वाली हो,' इस रूप में आपकी स्तुति हो गयी तो आपकी स्तुति के लिए इससे अच्छी उक्तियाँ और क्या हो सकती हैं ।। 7।।

सर्वस्य बुद्धिरूपेण जनस्य हृदि संस्थिते।

स्वर्गापवर्गदि देवि नारायणि नमोऽस्तुते ।। 8।।

बुद्धिरूप से सब लोगों के हृदय में विराजमान रहने वाली तथा स्वर्ग एवं मोक्ष प्रदान करने वाली नारायणी देवी! आपको नमस्कार है ।। 8।।

कलाकाष्ठादिरूपेण परिणामप्रदायिनि।

विश्वस्योपरतौ शक्ते नारायणि नमोऽस्तुते ।। 9।।

कला, काष्ठा आदि (समय की छोटी इकाइयाँ) के रूप से क्रमशः परिणाम (अवस्था परिवर्तन) की ओर ले जाने वाली तथा विश्व का उपसंहार करने में समर्थ नारायणी! आपको नमस्कार है ।। 9।।

सर्वमंगलमांगल्यै शिवे सर्वार्थसाधिके।

शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तुते ।। 10।।

आप सब प्रकार का मंगल प्रदान करने वाली मंगलमयी हो, कल्याणदायिनी शिवा हो। सब पुरुषार्थों को सिद्ध करने वाली, शरणागतवत्सला, तीन नेत्रों वाली एवं गौरी हो। आपको नमस्कार है ।। 10।।

सृष्टिस्थिति विनाशानां शक्तिभूते सनातनि।

गुणाश्रये गुणमये नारायणि नमोऽस्तुते ।। 11।।

आप सृष्टि, पालन और संहार की शक्तिभूता, सनातनी देवी, गुणों का आधार तथा सर्वगुणमयी हो। नारायणी! आपको नमस्कार है ।। 11।।

शरणागतदीनार्तपरित्राणपरायणे

सर्वस्यार्त्तिहरे देवि नारायणि नमोऽस्तुते ।। 12।।

शरण में आए हुए दीनों एवं पीड़ितों की रक्षा में सलंग्न रहने वाली तथा सबकी पीड़ा दूर करने वाली नारायणी देवी आपको नमस्कार है ।। 12।।

हँसयुक्तविमानस्थे ब्रह्माणीरूपधारिणि।

कौशाम्भःक्षरिके देवि नारायणि नमोऽस्तुते ।। 13 ।।

नारायणि! आप ब्रह्माणि का (ब्रह्मा की शक्ति) रूप धारण करके हँसों से जुते हुए विमान पर बैठती हो तथा कुशा घास से जल छिड़कती रहती हो। आपको नमस्कार है ।। 13।।

त्रिशूलचन्द्राहिधरे महावृषभवाहिनि।

माहेश्वरीस्वरूपेण नारायणि नमोऽस्तुते ।। 14।।

महेश्वरी रूप से त्रिशूल, चन्द्रमा एवं सर्प को धारण करने वाली तथा महान वृषभ की पीठ पर बैठने वाली नारायणी देवि! आपको नमस्कार है ।। 14।।

मयूरकुक्कुटवृते महाशक्तिधरेऽनघे।

कौमारीरूपसंस्थाने नारायणि नमोऽस्तुते ।। 15।।

मोरों और मृगों से घिरी रहने वाली तथा महाशक्ति धारण करने वाली कौमारीरूपधारिणी निष्पापे नारायणि! आपको नमस्कार है ।। 15।।

शंखचक्रगदाशार्ङ्गगृहीतपरमायुधे

प्रसीद वैष्णवीरूपे नारायणि नमोऽस्तुते ।। 16।।

शंख, चक्र, गदा, और शार्गंधनुषरूप उत्तम आयुधों को धारण करने वाली वैष्णवी शक्तिरूपा नारायणि। आप प्रसन्न होइये। आपको नमस्कार है।। 16।।

गृहीतोग्रमहाचक्रे दंष्ट्रोद्धृत वसुंधरे

वराहरूपिणी शिवे नारायणि नमोऽस्तुते ।। 17।।

हाथ में भयानक महाचक्र लिए और दाँतों पर धरती को उठाये बाराहीरूपधारिणी कल्याणमयी नारायणि! आपको नमस्कार है ।। 17।।

नृसिंहरूपेणोग्रेण हन्तुं दैत्यान् कृतोद्यमे।

त्रैलोक्यत्राणसहिते नारायणि नमोऽस्तुते ।। 18।।

भयंकर नृसिंहरूप से दैत्यों के वध के लिए उद्योग करने वाली तथा त्रिभुवन की रक्षा में सलंग्न रहने वाली नारायणि! आपको नमस्कार है ।। 18।।

किरीटिनि महावज्रे सहस्रनयनोज्जवले।

वृत्रप्राणहरे चैन्द्रि नारायणि नमोऽस्तुते ।। 19।।

मस्तक पर किरीट और हाथ में महावज्र धारण करने वाली, सहस्र नेत्रों के कारण उद्दीप्त दिखाई देने वाली और वृत्रासुर के प्राणों का अपहरण करने वाली इन्द्रशक्ति रूपा नारायणि देवी! आपको नमस्कार है ।। 19।।

शिवदूतीस्वरूपेण हतदैत्यमहाबले।

घोररूपे महारावे नारायणि नमोऽस्तुते ।। 20।।

शिवदूती रूप से दैत्यों की महती सेना का संहार करने वाली, भयंकर रूप धारण तथा विकट गर्जना करने वाली नारायणि! आपको नमस्कार है ।। 20।।

दंष्ट्राकरालवदने शिरोमालाविभूषणे।

चामुण्डे मुण्डमथने नारायणि नमोऽस्तुते ।। 21।।

दाढ़ों के कारण विकराल मुखवाली, मुण्डमाला से विभूषित, मुण्डमर्दिनी, चामुण्डारूपा नारायणी! आपको नमस्कार है ।। 21।।

लक्ष्मि लज्जे महाविद्ये श्रद्धे पुष्टिस्वधे ध्रुवे।

महारात्रि महाऽविद्ये नारायणि नमोऽस्तुते ।। 22।।

लक्ष्मी, लज्जा, महाविद्या, श्रद्धा, पुष्टि, स्वधा, ध्रुवा, महारात्रि तथा महाऽविद्यारूपा नारायणि। आपको नमस्कार है ।। 22।।

मेघे सरस्वति वरे भूति बाभ्रवि तामसि।

नियते त्वं प्रसीदेशे नारायणि नमोऽस्तुते ।। 23 ।।

मेघा, सरस्वती, वरा (श्रेष्ठा) भूति (ऐश्वर्यरूपा), बाभ्रवी (भूरे रंग की अथवा पार्वती), तामसी (महाकाली), नियता (संयमपरायणता), तथा ईशा (सब की अधीश्वरी) रूपिणी नारायणि! आपको नमस्कार है ।। 23।।

सर्वस्वरूपे सर्वेशे सर्व शक्तिसमन्विते।

भयेभ्यस्त्राहि नो देवि दुर्गे देवि नमोऽस्तुते ।। 24।।

सर्वस्वरूपा, सर्वेश्वरी तथा सब प्रकार की शक्तियों से सम्पन्न दिव्यरूपा दुर्गे! सब भयों से हमारी रक्षा करें। आपको नमस्कार है ।। 24।।

एतत्ते वदनं सौम्यं लोचनत्रयभूषितम्।

पातु नः सर्वभीतिभ्यः कात्यायनि नमोऽस्तुते ।। 25।।

कात्यायनी! यह तीन लोचनों से विभूषित आपका सौम्य मुख सब प्रकार के भयों से हमारी रक्षा करें। आपको नमस्कार है ।। 25।।

ज्वालाकरालमत्युग्रमशेषासुरसूदनम्।

त्रिशूलं पातु नो भीतेर्भद्रकालि नमोऽस्तुते ।। 26।।

भद्रकली! ज्वालाओं के कारण विकराल प्रतीत होने वाला, अत्यन्त भयंकर और समस्त असुरों का संहार करने वाला आपका त्रिशूल भय से हमें बचाए। आपको नमस्कार है ।। 26।।

हिनस्ति दैत्यतेजांसि स्वनेनापूर्य या जगत्।

सा घण्टा पातु नो देवि पापेभ्योऽनः सुतानिव ।। 27।।

देवि! वह तुम्हारा घण्टा जो अपनी ध्वनि से सम्पूर्ण जगत में व्याप्त होकर दैत्यों के तेज नष्ट कर देता है, वह तुम्हारा घण्टा हम लोगों की पापों से उसी प्रकार रक्षा करे, जैसे माता अपने पुत्रों की बुरे कर्मों से रक्षा करती है ।। 27।।

असुरासृग्वसापंक चर्चितस्ते करोज्ज्वलः।

शुभाय खड्गो भवतु चण्डिके त्वां नता वयम् ।। 28।।

चण्डिके! आपके हाथों में सुशोभित खड्ग, जो असुरों के रक्त और चर्बी से चर्चित है, हमारा मंगल करे। हम आपको नमस्कार करते हैं ।। 28।।

रोगानशेषानपहंसि तुष्टा रुष्टा तु कामान् सकलान भीष्टान्।

त्वामाश्रितानां न विपन्नराणां त्वामाश्रिता ह्याश्रयतां प्रयान्ति ।। 29।।

देवि! आप प्रसन्न होने पर सब रोगों को नष्ट कर देती हो और कुपित होने पर मनोवांच्छित सभी कामनाओं का नाश कर देती हो। जो लोग आपकी शरण में जा चुके हैं, उन पर विपत्ति तो आती ही नहीं। आपके शरण में गए हुए मनुष्य दूसरों को शरण देने वाले हो जाते हैं ।। 29।।

एतत्कृतं यत्कदनं त्वयाद्य, धर्मद्विषां देवि महासुराणाम्।

रूपैरनेकैर्बहुधाऽऽत्ममूर्तिं कृत्वाम्बिके तत्प्रकरोति कान्या ।। 30।।

देवि अम्बिके! आपने अपने स्वरूप को अनेक भागों में विभक्त करके नाना प्रकार के रूपों से जो इस समय इन धर्मद्रोही महादैत्यों का संहार किया है, वह सब दूसरी कौन कर सकती थी ।। 30।।

विद्यासु शास्त्रेषु विवेकदीपेष्वाद्येषु वाक्येषु च का त्वदन्या।
ममत्वगर्तेऽति महान्धकारे विभ्रामयत्येतदतीय विश्वम् ।। 31।।

विद्याओं में, ज्ञान को प्रकाशित करने वाले शास्त्रों में तथा आदिवाक्यों (वेदों) में आपके सिवा और किसका वर्णन है। आप ही ऐसी शक्ति है, जो इस विश्व को अज्ञानता तथा ममत्व के घोर अन्धकार से परिपूर्ण गड्ढे में निरन्तर भटका रही हो ।। 31।।

रक्षांसि यत्रोग्रविषाश्च नागा यत्रारयोदस्युबलानि यत्र।
दावानलो यत्र तथाब्धिमध्ये, तत्र स्थिता त्वं परिपासि विश्वम् ।। 32।।

जहाँ राक्षस, जहाँ भयंकर विष वाले सर्प, जहाँ शत्रु, जहाँ लुटेरों की सेना और जहाँ दावानल हो, वहाँ तथा समुद्र की बीच में भी साथ रहकर आप विश्व की रक्षा करती हो ।। 32।।

विश्वेश्वरि त्वं परिपासि विश्वं विश्वात्मिका धारयसीति विश्वम्।
विश्वेशवन्द्या भवती भवन्ति विश्वाश्रया ये त्वयि भक्तिनम्राः।। 33।।

विश्वेश्वरि! आप विश्व का पालन करती हो। विश्वरूपा हो, इसलिए सम्पूर्ण विश्व को धारण करती हो। आप भगवान विश्वनाथ की भी वन्दनीया हो। जो लोग भक्तिपूर्वक आपके सामने मस्तक झुकाते हैं, वे संपूर्ण विश्व को आश्रय देने वाले होते हैं ।। 33।।

देवि प्रसीद परिपालय नोऽरिभीतेर्नित्यं यथासुरधादधुनैव सद्यः।
पापानि सर्वजगतां प्रशमं नयाशु, उत्पातपाकजनितांश्च महोपसर्गान्।। 34।।

देवि! प्रसन्न होइये। जैसे इस समय असुरों का वध करके आपने शीघ्र ही हमारी रक्षा की है, उसी प्रकार सदा हमें शत्रुओं के भय से बचाइये। संपूर्ण जगत का पाप नष्ट कर दें और उत्पात एवं पापों के फलस्वरूप उत्पन्न होने वाले महामारी आदि बड़े–बड़े उपद्रवों को शीघ्र दूर करें ।। 34।।

प्रणतानां प्रसीद त्वं देवि विश्वार्तिहारिणी।
त्रैलोक्यवासिनामीड्ये लोकानां वरदा भव ।। 35।।

विश्व की पीड़ा दूर करने वाली देवि! हम आपके चरणों पर पड़े हुए हैं, हम पर प्रसन्न होइये। त्रिलोकनिवासियों की पूजनीया परमेश्वरि! सब लोगों को वरदान दें ।। 35।।

अष्टमी – नवरात्रि, 18–10–1988

महालक्ष्मी स्तोत्र में ये सब चीजें क्यों होनी चाहिए ? क्योंकि यह कुण्डलिनी है। महा–लक्ष्मी कुण्डलिनी की वाहिका हैं। अतः आठ लक्ष्मियाँ 'अष्टलक्ष्मी' हैं इसके बाद महालक्ष्मी आती हैं और इसके बाद दक्षलक्ष्मी। हमारे अन्दर एक के बाद एक ये शक्तियाँ हैं जिनकी अभिव्यक्ति महालक्ष्मी नाड़ी पर होती है। महालक्ष्मी नाड़ी पर ही हमें गौरी की बात करनी होती है क्योंकि वे ही कुण्डलिनी हैं। अतः लोगों को बात करनी होती है और यही कारण है कि लोग कहते हैं, ''उदे उदे हे अम्बे''। ये भजन वे महालक्ष्मी के मन्दिर में गाते हैं। क्यों ? क्योंकि केवल महालक्ष्मी के मन्दिर में ही उन्हें कहना पड़ता है कि हे कुण्डलिनी माँ अब हम तैयार हैं, हमारे अन्दर महालक्ष्मी तत्व है कृपा करके अब आप जागृत हो जाइए। यही कारण है कि आह्वान करना पड़ता है। पालन का अर्थ है पोषण करना या बच्चे की देखभाल करना। वे पूरे विश्व की, माँ की तरह से, देखभाल करती हैं।

हे देवी! आप पूरे विश्व का आधार हैं क्योंकि आप पृथ्वी माँ के रूप में विद्यमान हैं और पूरे ब्रह्माण्ड को धारण कर रही हैं। पृथ्वी माँ के कारण ही ये ब्रह्माण्ड चल रहा है क्योंकि पृथ्वी माँ का सृजन ब्रह्माण्ड में से किया गया था और पूरे ब्रह्माण्ड को पृथ्वी माँ ही सम्भालती हैं। जैसे आप कोई घर बना रहे हैं। घर तो है परन्तु जो व्यक्ति घर में रहता है वही इसको संभालता है। रहने वाले व्यक्ति के बिना घर वैसे ही अर्थहीन है जैसे यदि

विवाह में दूल्हा ही न हो, तो विवाह का क्या अभिप्राय है। केवल पृथ्वी माँ का अस्तित्व ही पूरे ब्रह्माण्ड को अर्थ प्रदान करता है।

महालक्ष्मी हमारे मस्तिष्क की देखभाल करती हैं। अतः जो भी ज्ञान आपको मस्तिष्क के माध्यम से आता है उसे महालक्ष्मी तत्व द्वारा ही सिद्ध किया जाता है, उसकी देखभाल की जाती हे या ये कहें कि उसका पोषण किया जाता है।

'परावाणी' का आरम्भ यहीं से होता है (श्रीमाताजी अपनी नाभि पर हाथ रखकर इसकी व्याख्या करती हैं)। यह नाद (Sound) है जोकि मौन है।

तब यह हृदय पर आता है और अनहद बन जाता है और 'पश्यन्ती' कहलाता है क्योंकि यह मात्र साक्षी रूप होता है। 'वाणी', वाणी की वह शक्ति, नाद की वह शक्ति, साक्षी मात्र है और अनहद अवस्था है। तब यह विशुद्धि स्तर पर आती है और 'मध्यमा' कहलाती है। अभी भी यह मध्यम अवस्था में, गले तक है। परन्तु जब यह मुँह तक आती है तब यह 'वैखरी' बन जाती है अर्थात् तब यह बोलती है। तो इस प्रकार से परावाणी का अर्थ ये है, या कहें कि जब परमात्मा को कुछ कहना होता है तो वे परावाणी में कहते हैं जिसे आप सुन

नहीं सकते। आप नहीं जानते कि परमात्मा क्या कह रहे हैं। इसे आप सुन नहीं सकते। बिल्कुल इसी प्रकार से आपके अन्दर भी परावाणियाँ हैं जोकि निःसंदेह उसी परावाणी की प्रतिबिम्ब हैं जिसे आप सुन नहीं सकते। अपने पेट में आप 'वाणी' को सुन नहीं सकते परन्तु पेट में आपको कुछ कष्ट हो सकते हैं, विशेष रूप से कैंसर या ऐसी कोई तकलीफ हो सकती है। तब दिखाई पड़ने लगता है कि कोई समस्या है। इससे 'स्पन्दन' होने लगता है। जो चैतन्य लहरियाँ आप प्राप्त करते हैं यह परावाणी का ही प्रभाव है, जो दर्शाता है कि कोई कष्ट है। उस कष्ट को आप देख सकते हैं क्योंकि यह धड़कने लगता है। कुण्डलिनी भी जब उठने लगती है तो यह कोई आवाज़ नहीं करती परन्तु यह यहाँ सहस्रार पर आ जाती हैं और यदि कोई समस्या हो तो ऊपर जाते हुए यह उस स्थान पर धड़कती है। जब तक उस स्थान पर रुकावट होती है यह वहाँ पर धड़कती ही रहती है। यह स्वच्छ जल की तरह से है। जब बहता है तो इसमें कोई आवाज़ नहीं आती परन्तु इसके सम्मुख जब कोई रुकावट आती है, बाधा आती है तो यह आवाज़ करता है। अतः इसमें अन्तर्जात आवाज़ है। अतः एक अन्तर्जात आवाज़ है। जल की टक्कर के कारण आवाज़ आती है और अन्तर्जात रूप से ही यह आवाज़ वाणी का रूप ले लेती है। तो यह मौन आवाज़ इन चारों अवस्थाओं से ऊर्ध्वगति की ओर आकर जब मुँह तक पहुँचती है केवल तभी यह 'वैखरी' बनती है। परमात्मा का ही उदाहरण लें, जब वे बोलते हैं, जो कुछ भी बोलते हैं, 'परावाणी' की अवस्था को प्राप्त किए बिना उनकी वाणी को कोई नहीं सुन सकता। बिना 'परावाणी' को अनुभव

किए आप परमात्मा की आवाज़ को नहीं सुन सकते। तब क्या होता है कि परमात्मा को स्वयं इस पृथ्वी पर अवतरित होना पड़ता है और आपके सम्मुख रहस्यों की व्याख्या करने के लिए अपनी 'वैखरी' का उपयोग करना पड़ता है। उससे आप नीचे की ओर चलने लगते हैं। तब आप मध्यमा अवस्था पर आते हैं जहाँ शांति महसूस करते है और पश्यन्ती अवस्था पर आने पर अपनी साक्षी अवस्था का आनन्द लेते हैं और जब 'परावाणी' पर आते हैं जहाँ आपको आवाज़ सुनाई पड़ती है, या आप कह सकते हैं कि आपको सूचना मिलती है, मात्र सूचना। इसमें कोई आवाज़ नहीं होती, कोई शोर नहीं होता, कुछ नहीं होता सिर्फ विचारों जैसी सूचना। विचारों की कोई आवाज़ नहीं होती, अतः आप परावाणी से प्रेरणा प्राप्त करते हैं परन्तु विचारों की कोई आवाज़ नहीं होती। इसी प्रकार से यह आवाज़विहीन चीज़ है जो आती है।

एक सहजयोगी का प्रश्न : ''क्या यह भवसागर में है, नाभि में है या किसी विशेष स्थान पर है ? ''

श्रीमाताजी : नाभि में। यह लक्ष्मी तत्व है। जब महालक्ष्मी चलती है तो सभी कुछ कार्यान्वित होता है। परन्तु जब आप आज्ञा से ऊपर जाने लगते हैं तो यह 'वाणी' के रूप में चलती है। अनहद अर्थात् चैतन्य लहरियों की आवाज़ – मैं इसे सुन सकती हूँ। मेरे कहने का अर्थ है अगर कोई व्यक्ति मुझ पर हाथ रखे तो वह भी इस आवाज़ को सुन सकता है। आप सभी प्रकार की आवाज़ें सुन सकते हैं और तब यह आपके सिर में आती

है। जब यह सहस्रार में पहुँचती है तो यह धड़कन आरम्भ करती है और तब ब्रह्मरन्ध्र खुलता है। वाणी आवाज़ बन जाती है और परमात्मा से एकरूप हो जाती है। परन्तु यह अवस्था, इस अवस्था तक यह मानव में प्रायः यहीं से आती है। इसका यह भाग परमात्मा से है और जब यदि दिया जाता है तो आज्ञा चक्र खुल जाता है और सहस्रार को जब यह पार करता है तो यह वाणी, चैतन्य लहरियों की ये आवाज़, निकलती है। मुख्य बात ये है कि व्यक्ति को यह समझना होता है कि जब आप 'निर्विकल्प' अवस्था में पहुँच जाते हैं तो वाणी के माध्यम से आपके मस्तिष्क में प्रेरणा आती है। वही वाणी आपके मस्तिष्क में प्रेरणा देती है और इस प्रेरणा से आप समझ सकते हैं। जैसे मैं कहती हूँ कि आप बारीकी से चीजों को समझें तो इसलिए कहती हूँ क्योंकि आप संवेदनशील, सूक्ष्म व्यक्ति बन गए हैं। तो आप भी सूक्ष्म को समझने लगते हैं और सूक्ष्म बातें कहने लगते हैं। उदाहरण के रूप में जैसे कुछ लोग (सहजयोगी) कवि बन गए हैं।

एक सहजयोगी के प्रश्न के उत्तर में श्रीमाताजी ने कहा : – आरम्भ में जब सदाशिव और आदिशक्ति एक दूसरे से अलग हुए तो उस समय जो 'टंकार' थी वही मुख्य चीज आरम्भ हुई। तब आदिशक्ति ने तीन रूप धारण किए – और एक रूप से उन्होंने पंचमहाभूत बनाए। वह टंकार (ओंकार) ही मंगलमयता और पावनता है, वही टंकार जो पूरे वातावरण में फैल गई, वह मंगलमयता और पावनता है। सभी सृजित चीजों में इसका प्रवेश हुआ। परन्तु इसका सृजन दाईं (रजस तत्व) से किया गया था। तो यद्यपि यह इससे घिरी हुई है, जैसे

ये घर बना हुआ है परन्तु इसका परिवेश (Surrounding) भिन्न है। अतः वातावरण की वायु यदि ओंकार है तो ओंकार ने यद्यपि इस घर को बनाया नहीं है परन्तु घर के इर्द गिर्द ओंकार का परिवेश है। तो ओंकार ही इसे ढालता है, चलाता है क्योंकि चैतन्य जोकि वास्तव में ओंकार है, वह हर समय पथ प्रदर्शन करता है, आयोजन करता है और हर चीज के अन्दर प्रवेश करके उसे सुधारता है।

सहजयोगी : – श्रीमाताजी यह कार्य तो केवल देवी करती हैं ?

श्रीमाताजी : – देवी सभी कार्य करती हैं, इसमें कोई सन्देह नहीं है। वे सभी कुछ करती हैं, वे कर्त्ता हैं। सर्वप्रथम वे गणेश का सृजन करती हैं, जिनके माध्यम से मंगलमयता और पावनता का नियंत्रण होता है और जिसके माध्यम से वे (देवी) पूरे ब्रह्माण्ड के परिवेश में समा जाती हैं। तत्पश्चात् ये सभी चीजों में प्रवेश कर जाती हैं, वैसे ही जैसे मैं किसी चीज को छू दूँ तो वह पावन हो जाती है, क्योंकि चैतन्य इसमे चला जाता है और ये पावन तथा मंगलमय बन जाती है। तो यह किसी भी चीज में प्रवेश कर सकती है, परन्तु चीजें यदि मृत हों तो उनमें ओंकार नहीं होता। इसके अन्दर (ओंकार में) विद्युत चुम्बकीय शक्तियाँ (Electro Magnetic Forces) हैं और ये विद्युत चुम्बकीय शक्तियाँ उससे उच्चत्म अवस्था में चली जाती है जब इसमें नाइट्रोजन (Nitrogen) प्रवेश कर जाता है। तब यह प्राण (Prãna) बन जाती है।

तो भिन्न अवस्थाओं में से गुजरने के पश्चात् मनुष्य बनता है। मानव बनने के पश्चात् भी **जब तक व्यक्ति आत्मसाक्षात्कारी नहीं हो जाता तब तक व्यक्ति निम्न स्तर का मानव ही रहता है।** आत्म–साक्षात्कार प्राप्त करने के पश्चात् कहानी भिन्न हो जाती है। अतः विकासावस्था की सभी अवस्थाओं में ओंकार–जिसे आप चैतन्य कहते हैं, यही हर चीज में प्रवाहित होता है। ये तीनों शक्तियाँ भी यही चैतन्य उपयोग करती हैं। यही कारण है कि ये ओंकार 'ॐ' ए–यू–यम कहलाता है क्योंकि देवी भिन्न कार्यों को करने के लिए इस चैतन्य की भिन्न–भिन्न शक्ति का उपयोग करती है। अतः पूरे 'ॐ' का उपयोग नहीं किया जाता। यह अत्यन्त जटिल मामला है।

बेहतर होगा कि इन सूक्ष्मताओं को समझने का प्रयत्न न करें। जितना अधिक प्रयत्न आप करेंगे उतना अधिक उलझते जाएंगे। इतनी अधिक आपकी आज्ञा पकड़ेगी। बेहतर होगा अपनी आज्ञा को शान्त रखें। **मुझे कहना चाहिए कि आज्ञा की अपेक्षा भक्ति की ओर ज्यादा जायें।** भक्ति आपको शीघ्र प्राप्त हो जाएगी।

परन्तु हर समय यही कहते रहना कि यह क्या है ? वह क्या है ? आदि आदि ? इससे हर समय आपकी आज्ञा का मंथन होता रहता है। यह एक विशाल चक्र के चलने सम है। इसे रोक लेना ही सर्वोत्तम है। बस भक्ति में उतर जायें। शंकराचार्य ने क्या किया था ? सर्वप्रथम उन्होंने 'विवेक चूड़ामणि' लिखी। परन्तु शीघ्र ही वे इन वाद–विवादों से तंग हो गए। तब उन्होंने कहा कि ये सब बेकार है। तब उन्होंने ये सब कुछ लिखा।

अतः सर्वप्रथम आप भक्ति में उतर जायें क्योंकि इस प्रकार की जिज्ञासा का कोई अन्त नहीं। मेरी पुस्तक छपने वाली है। आप इसे पढ़ सकते हैं।

ग्रेगोर की पुस्तक की तरह, उसने एक पुस्तक लिखी है जिसके कुछ आरम्भिक अध्याय– प्रथम अध्याय बहुत अच्छा था जिसमें उसने लिखा कि वह मुझसे किस प्रकार मिला आदि, जो सब बहुत मधुर था और बाद में अचानक जिबराल्टर की चट्टान आगे आ गई। जो वह सारी चीजें जानता था और उसने ये सब लिखा। मैंने कहा, समाप्त! कोई भी तुम्हारी इस किताब को नहीं पढ़ेगा। तो उसके साथ मिलकर मैंने एक वर्ष तक इस पुस्तक का संशोधन किया, यह बहुत कठिन कार्य था। उसमें आज्ञा बहुत अधिक थी, यह बहुत कठिन था। अन्त में मैंने कहा, अब सभी चीजें संबंधित हो गई हैं। केवल इतना करना है कि ये दो अध्याय पुस्तक के अन्त में ले जाने हैं। इस बात पर तो वह मूर्च्छित सा हो गया। मैंने कहा, क्योंकि ये दो अध्याय जिबराल्टर की चट्टान सम हैं, केवल बुद्धिजीवी लोग ही इन्हें पढ़ना चाहेंगे। अतः बेहतर होगा कि तुम इन अध्यायों को दूसरी ओर ले जाओ। वह कहने लगा, आप ऐसा कैसे कर सकती हैं ? मुझे पूरी पुस्तक ही परिवर्तित करनी पड़ेगी। मैंने कहा, नहीं, मैंने इसे आरम्भ से पढ़ा है। तो बेहतर होगा कि तुम इन अध्यायों को उठाकर इसलिए पीछे ले जाओ क्योंकि ये मेरा आदेश है। अब कोई भी उन अध्यायों को नहीं पढ़ता। जो आज्ञा बाधित हैं केवल वही इन्हें पढ़ते हैं और पकड़ जाते हैं। **तो मेरा कहने का अभिप्राय यही है कि अपनी आज्ञा को नियंत्रित करें और भक्ति में उतर**

जायें। पूरी चीजों में से मैं कितनी व्याख्या आपके सम्मुख कर सकती हूँ ? बहुत ही थोड़ी सी। आप यदि मुझे पूछें कि श्री माताजी जहाँ कोई नहीं होता वहाँ से भी आपको इतने सारे काम करने वाले कैसे मिल जाते हैं ? वहाँ पर आपको प्रकाश कैसे प्राप्त हो जाता है ? आप लोगों में वो 'चित्ति' नहीं है, आपके अन्दर वह कम्प्यूटर नहीं है। ये बात मैं आपको बता सकती हूँ। परन्तु यह जटिल बन जाएगा। केवल भक्ति में उतर जायें।

बहुत अधिक प्रश्न पूछना–भक्ति की हत्या करना है। स्वयं देखें। मान लो कि आप जल में हैं तो क्या आप जल से पूछेंगे कि तुम कहाँ से आते हो। वहाँ आप केवल तैरते हैं। जाकर, जल से ये नहीं पूछते कि तुम कहाँ से आ रहे हो ? आप में कौन से तत्व हैं ? या जब आपको कोई चीज खानी होती है तो क्या आप ये पूछतें हैं ये कैसे बनी है ? इसकी उत्पत्ति कहाँ से हुई है ? ये कहाँ से आया है ? ये क्या है ? वो क्या है ? इसका रासायनिक विश्लेषण नहीं करते, इसे बस खा लेते हैं। अगर आपको भूख लगी है तो इसका आनन्द लें। दिमागी उलट–फेर बेकार होती है। ये बात मैं आपको बताती हूँ।

पूजा करते हुए कभी प्रश्न नहीं करने चाहिए। इससे पूजा खण्डित हो जाती है। प्रश्न मेरे लिए बहुत बड़ी सिरदर्दी हैं। मैं पाती हूँ कि प्रश्न पूछने वाले लोगों में भक्ति की गहनता नहीं होती। मस्ती में जब आप होते हैं तो आप कुछ भी नहीं पूछते (जब मस्त हुए फिर क्या बोलें)।

किसी ब्राह्मण से भी यदि आप प्रश्न पूछेंगे तो वह आपको सोपान उठाकर मारेगा या चर्च में जब वह बाइबल का उपदेश (सर्मन) पढ़कर सुना रहा है और, यदि आप अपने स्थान पर खड़े होकर पूछें श्रीमान, ''आपका ये कहने का क्या अर्थ है।'' तो जो कुछ भी उसके हाथ लग जाएगा वही उठाकर आपको मार देगा।

* हृदय में बुद्धि के रूप में – इसके विषय में आपको क्या कहना है ? हृदय में बुद्धि के रूप में देवी निवास करती है

जैसे कुयें में यदि आप घड़ा डालें तो उसके अन्दर भी पानी होता है बाहर भी। व्यक्ति को ये महसूस करना है कि मनुष्य गतिमूलक (Kinetic) है। मेरा कहने का अर्थ ये है कि पुरुष अवतरण गतिमूलक है। संभाव्य शक्ति (Potential Energy) मादा शक्ति है। अतः कृष्ण को जब कंस का वध करना था तो उन्हें राधा से सहायता माँगनी पड़ी। शक्ति ऐसी होती है। शक्ति के बिना अवतरणों का कोई अस्तित्व नहीं। ये उसी प्रकार से है जैसे प्रकाश के बिना लैम्प का कोई अस्तित्व नहीं। तो ये मुख्य रूप हैं परन्तु इनके पीछे इनकी शक्तियाँ हैं, जिन्होंने ये सारे कार्य सम्पन्न किए। शिव ने भी इसी प्रकार से क्रुद्ध होकर राक्षसों का वध किया क्योंकि उनके अन्दर उनकी शक्ति बह रही थी। वह शक्ति स्वयं नररूप धारण करके नहीं आई और न ही उसने ये कहा कि आप यदि कोई विजय प्राप्त करेंगे या कोई अच्छा कार्य करेंगे, या कोई पदक प्राप्त करते हैं, तो आपको पदक माला भेंट की जाएगी। अतः देवी ने जिन राक्षसों का वध किया था, उनकी मुण्डमाला अन्य राक्षसों को

भयभीत करने के लिए अपने गले में पहनी। उन्होंने बताया कि तुम्हारा भी वध करके तुम्हारे मुण्डों की माला भी मैं इसी प्रकार धारण करूँगी। ये सब उन्हें डराने के लिए था।

पूजा के प्रति दृष्टिकोण आपका ऐसा होना चाहिए मानो देवी ने आपको मंत्रमुग्ध कर दिया हो। इस प्रकार आप देवी की स्तुति गान करते हैं। यह कोई बौद्धिक सूझ–बूझ नहीं है। स्तुति गान तो आप देवी को प्रसन्न करने के लिए कर रहे हैं। अतः दृष्टिकोण ऐसा होना चाहिए। यह बौद्धिक शोध–प्रबन्ध नहीं है। यह तो आप देवी के प्रति अपनी श्रद्धा अभिव्यक्त कर रहे हैं। वैसे ही जैसे आप किसी व्यक्ति को प्रेम कर रहें हैं तो आपका हर शब्द उसे रिझाने के लिए होता है। देवी की स्तुति भी आप उन्हें रिझाने के लिए करते हैं। जिन सन्तों ने ये ग्रन्थ लिखे उन्होंने ही ये सब कुछ देवी के प्रति केवल अपनी भावाभिव्यक्ति करने के लिए कहा है कि आप देवी हैं, आप यह हैं आप वह हैं, आप अति महान हैं। ऐसे ही कुछ पत्र मुझे भी प्राप्त होते हैं जिनमें सहजयोगियों की भावनाओं की अभिव्यक्ति होती है।

परन्तु यह कोई प्रवचन नहीं है। यह तो हृदयाभिव्यक्ति है अतः इसे पूर्ण भक्ति के साथ किया जाना चाहिए।

जो कहा गया है उसे हृदय से महसूस करने का प्रयत्न करें – आप मेरे सम्मुख बैठे हुए हैं और आप अपने हृदय से कहें कि ये बात हम पूर्ण विनम्रता के साथ कह रहे हैं, इसकी प्रार्थना जैसी अभिव्यक्ति है। यह

प्रार्थना है और इसे प्रार्थना ही होना चाहिए। किसी प्रकार का बौद्धिक वाद–विवाद नहीं। यह देवी से प्रार्थना है। जब तक आपमें यह दृष्टिकोण विकसित नहीं हो जाता, आप आगे नहीं बढ़ सकते।

उमड़ते हृदय से ये सब बातें उच्चारण करें। हृदय को खोल दें, इसे उड़ेल दें। परन्तु बौद्धिक रूप से इन्हें यदि आप शब्दों के रूप में लेंगे, उनका विश्लेषण करेंगे तो सब व्यर्थ है। यह शब्द तो फूलों की तरह से हैं। आप स्वयं भी पुष्प सम हैं क्योंकि अपनी 'वैखरी' के माध्यम से आप ये शब्द मुझे कह सकते हैं। आप ये कहना चाहते हैं। अन्यथा यदि आप ये शब्द उच्चारण करेंगे तो यह केवल जुबानी जमा खर्च होगा। जो भी कुछ आप कहेंगे वह जुबानी जमा खर्च बनकर रह जाएगा। मात्र यह लगेगा कि कुछ हो रहा है।

अपने हृदय को ज्योतिर्मय करने के लिए आपको स्तुति करनी होगी, अपनी अभिव्यक्ति करनी होगी। आपके मन की भावना ऐसी होनी चाहिए मानो आप यह सब बातें मुझसे कहना चाहते हैं। मेरी साक्षात् उपस्थिति में आप यह सब नहीं कह सकते। आपको इससे एक–रूप हो जाना चाहिए। इससे समन्वित हो जाना चाहिए। आप ही यह सारी स्तुति कर रहे हैं।

यह तो कृतज्ञताभिव्यक्ति है। यही अभिव्यक्ति आप कर रहें हैं। इसे अपनी कृतज्ञता की अभिव्यक्ति मानें,

यह आपकी हृदयाभिव्यक्ति है।

'विश्वेश्वर' भी विनम्र हो जाते हैं। विश्वेश्वर अर्थात् पूरे ब्रह्माण्ड के ईश्वर, जो कि सदाशिव या शिव हैं वो भी विनम्र हो जाते हैं।

पूजा करते हुए निर्विचारिता में बने रहें, कुछ सोचे नहीं। यह बात ठीक है कि मैं ही ज्ञान हूँ और मैं ही आपको ज्ञान प्रदान करती हूँ परन्तु आपका लक्ष्य ज्ञान प्राप्त करना नहीं होना चाहिए। आपका लक्ष्य भक्ति प्राप्ति होनी चाहिए। यह आपको स्वेच्छित आनन्द प्रदान करती है और ऐसे लोग (ज्ञान के पीछे दौड़ने वाले) मैंने देखा है, सहजयोग से बाहर चले गए हैं। मैं आपको चेतावनी दे रही हूँ। जिन लोगों का भी लक्ष्य बौद्धिक ज्ञान प्राप्ति था वो सब एक–एक कर के सहजयोग से बाहर हो गए हैं। कभी आपको मुझसे प्रश्न नहीं पूछने चाहिए, इसी को मैं विशुद्ध बुद्धि कहती हूँ। यह सब जानने का क्या लाभ होगा ? आप यदि प्यासे हैं तो 'भक्ति' का अमृत पान कर लें। मान लो आप प्यासे हैं और मैं आपको भाषण देना शुरू कर दूँ, आप वास्तव में यदि प्यासे हैं तो कहेंगे '' अरे बाबा, हमें पानी दीजिए।'' अपने बौद्धिक चातुर्य से आप लोगों को सहज में नहीं ला सकते, नहीं, कभी नहीं। केवल आत्म–साक्षात्कार द्वारा और चैतन्य लहरियों द्वारा ही आप उन्हें ला सकते हैं। यदि कोई बहस करने लगे, अहं के माध्यम से बोलने लगे, तो किस प्रकार आप उससे बात

कर सकते हैं। आप तो आत्मा के माध्यम से बात कर रहे हैं। वह अहं के माध्यम से बोल रहा है। या तो आप उसे आत्मा के स्तर तक ले आयें या बात करना बन्द कर दें। यह तो ऐसा हुआ मानो आप किसी बहरे व्यक्ति से बात कर रहें हों। आप कुछ कर रहे हों और वह कुछ कह रहा हो। जितना चाहे आप बहस कर लें उसे समझा नहीं सकते। यह तो ऐसा अनुभव है जो अन्तः परिवर्तन के माध्यम से ही संभव है।

नवमी – नवरात्रि, 19–10–1988

आज नवरात्रि का अन्तिम दिन है। जैसे आप अनने अन्दर देखते हैं, हम सबके लिए यह परमोत्कर्ष बिन्दु होना चाहिए। हमारे अन्दर उत्थान के लिए सात चक्र हैं और दो चक्र इनसे ऊपर हैं। अतः इन सभी नौ चक्रों को इसी जीवन में पार करना आवश्यक है। यही आपका लक्ष्य होना चाहिए। परन्तु आप लोग यदि केवल आज्ञा में ही चलेंगे तो आप अधिक ऊँचे नहीं उठ सकते। इसी चक्र (आज्ञा) पर बहुत से लोग खो गए। अतः यह अत्यन्त महत्वपूर्ण चक्र है। दुर्गा की षष्टी को बहुत महत्वपूर्ण माना जाता है। कहा जाता है कि देवी नाव पर सवार होकर आती हैं। कलकत्ता के लोगों को इस बात पर विश्वास है कि षष्टी का दिन इसे पार करने के लिए बहुत बड़ा दिन है। हम सब लोगों के साथ भी यही समस्या है कि यह षष्टी का दिन (आज्ञा) अभी भी हमारे सिर पर सवार है और हम इसमें से निकल नहीं सकते। अतः नवम अवस्था तक आने के लिए चाहे हम पूजा करें या कुछ और परन्तु अभी तक हम छठी अवस्था में हैं। हम बाह्य रूप से ही पूजा कर रहें हैं। सप्तमी का दिन ऐसा होता है जहाँ मैं विद्यमान होती हूँ। परन्तु सातवीं, आठवीं और नौवीं अवस्था को छठी अवस्था पार करने के बाद ही प्राप्त किया जा सकता है। आज मैं आपको छठी अवस्था के विषय में बताउँगी क्योंकि इसके विषय में जानना हम सबके लिए महत्वपूर्ण है, यह जानना कि षष्ठी के दिन

देवी ने क्या किया।

महालक्ष्मी मेरी रूप में अवतरित हुईं और अपने पुत्र को जन्म दिया। ये ईसामसीह थे। मैरी की इच्छा थी कि ईसा–मसीह अन्य सभी लोगों के लिए आज्ञा चक्र को पार करें और इस प्रकार से ईसा मसीह को चैतन्य का सूक्ष्म रूप बनना पड़ा। वे चैतन्य के सूक्ष्म रूप थे। जिस प्रकार से वे पानी पर चले, जिस प्रकार से उन्होंने अन्य बहुत से चमत्कारिक कार्य किए, उससे उन्होंने दर्शाया कि वे चैतन्य थे और अन्ततः वे चैतन्य बन गए और अपने सूक्ष्म शरीर को त्यागकर उन्होंने छठी अवस्था को पार कर लिया।

यह धारणा अब वास्तविकता है परन्तु किसी ऐसे व्यक्ति के लिए जो अभी तक आत्म–साक्षात्कारी नहीं है, जिसने चैतन्य लहरियाँ महसूस नहीं की हैं, वह इस सत्य को स्वीकार नहीं कर सकता। अतः वह ईसा–मसीह के विरुद्ध चला जाता है और अपनी आज्ञा के माध्यम से ईसा विरोधी कहानियाँ गढ़ता है। वह ऐसी बातें करता है जैसे ईसा–मसीह एक सर्व–साधारण मानव थे, क्योंकि इससे परे वह जा ही नहीं सकता। अभी तक वह आज्ञा की अवस्था में है और इन सब चीजों को करते हुए वह ईसा–मसीह के चक्र (आज्ञा) को पार नहीं कर सकता।

अब आज्ञा चक्र की बात ऐसी है कि मानव इसके दोनों ओर बायें और दायें पर कार्यरत है। बाईं आज्ञा आपके भूतकाल को जाती है और आप अपने देश के विषय में सोचते हैं कि यह एक महान देश था, या इंग्लैण्ड

की तरह वे सोचते हैं कि वे महान शासक थे। इसके बाद वे सोच सकते हैं कि उनका जन्म बहुत ऊँचे परिवार में हुआ –आदि आदि–**ये सभी चीजें वे सोच सकते हैं। इस प्रकार की सोच उन्हें बाईं आज्ञा की बाधा दे सकती है। ये सारी चीजें जब आप महसूस करते हैं तो इसमें आपका भूतकाल होता है। इसके अतिरिक्त अन्य लोगों के भूतकाल में जाना भी बाईं आज्ञा की पकड़ का कारण बनता है। जैसे कोई व्यक्ति आपको अपने भूतकाल के विषय में बता रहा हो, ऐसा हुआ, वैसा हुआ या कोई स्वयं आदि अपने भूतकाल के विषय में सोचे कि मेरे साथ इतनी बुरी घटना हुई, ऐसा नहीं होना चाहिए था या इसके विषय में रोए–बिलबिलाए। ये सारी बातें आपको बाईं आज्ञा की बहुत भयंकार पकड़ दे सकती हैं और यदि आपकी आज्ञा पकड़ जाए तो इसे दूर करना बहुत कठिन है क्योंकि आपने स्वयं ये समस्या खड़ी की है।**

तीसरी बात ये है कि जब किसी नकारात्मक शक्ति का आक्रमण आप पर होता है तो आप बिल्कुल भूल जाते हैं कि आप क्या हैं। आप नहीं जानते कि आप क्या हैं। जो भी कुछ लोग आपको बताते हैं आप उस पर विश्वास कर लेते हैं। लोग कहते हैं कि ऐसा करो और आप वैसा करने लगते हैं। लोग आपसे ध ान माँगते हैं और आप उन्हें धन दे देते हैं, वे कहते हैं समुद्र में कूद पड़ो ओर आप कूद पड़ते हैं। ये लोग सामूहिक आत्महत्यायें करवा सकते हैं। इसी बाईं आज्ञा के माध्यम से वे सम्मोहन करते हैं और एक बार जब वे सम्मोहन

कर लेते हैं तो फिर आपसे कुछ भी ले लेते हैं। सम्मोहन के माध्यम से वे लोगों का इलाज भी करते हैं। कोई भी व्यक्ति जब सम्मोहित हो जाता है तो ऊर्जा उसके उस शारीरिक पक्ष की ओर बहने लगती है जो उसके शारीरिक रोगों को प्रभावित करती है और उसके शारीरिक रोग ठीक होने लगते हैं परन्तु उसकी बाईं ओर पकड़ जाती है। अतः वह व्यक्ति बाईं ओर की बाधाओं से ग्रस्त हो जाता है यद्यपि शारीरिक रूप से वह ठीक हो जाता है। बहुत से लोगों पर ये इस प्रकार के हत्थकण्डे अपनाते हैं और उनमें मृत आत्माएं डाल देते हैं। अस्थायी रूप से उनमें यह सब घटित होता है और लगता है कि वह सामान्य व्यक्ति बन गए हैं परन्तु वास्तव में उनके अन्दर कोई और ही बैठा होता है। वे बहुत अधिक थक जाते हैं और अकेले ही पड़े रहना (Recluse) चाहते हैं। किसी का सामना वे नहीं कर सकते। बाईं ओर की नकारात्मक शक्तियों के कारण ऐसी बहुत सी चीजें हो सकती हैं, इनका वर्णन नहीं किया जा सकता जैसे कैंसर, स्नायु रोग और पारकिन्सन रोग आदि मनौदैहिक रोग इस कारण से हो जाते हैं। उस दिन मैं एक महिला से मिली, अचानक उसका रंग काला पड़ गया, शरीर सूज गया, उसके शरीर पर गाँठे थीं, उन्हें कोई भी ठीक न कर पा रहा था। केवल तीन दिन सहजयोग उपचार करवाने पर वह काफी ठीक हो गई। तो ये सारी समस्यायें व्यक्ति को बाईं आज्ञा से आती हैं और कुछ गलत लोग इनका दुरुपयोग करते हैं। मुसलमान लोगों में ऐसे कुकृत्य मैंने विशेष रूप से देखें हैं। मैं नहीं जानती क्यों, परन्तु उनमें इस प्रकार का रोना–बिलखना, क्रोध आदि करना पाया जाता है। अपनी तकलीफों और कष्टों के गीत वे गाते हैं।

विशेषरूप से विरह–गीत और इसी तरह की अन्य मूर्खतायें, तथा इस प्रकार वे बाईं आज्ञा पर पकड़ जाते हैं। बाईं आज्ञा की पकड़ जब दृढ़ हो जाती है तो यह दाईं आज्ञा को भी बेंधने लगती है। बाईं और दाईं आज्ञा परस्पर सम्बन्धित हैं। जब बाईं आज्ञा दाईं आज्ञा में प्रवेश कर जाती है तब व्यक्ति इस प्रकार के भयानक तत्वों के हाथ में खेलने लगता है। जब वह व्यक्ति इनका विरोध करता है उसे दर्द होगें, शारीरिक कष्ट हो जायेंगे परन्तु ज्योंही वह उन्हें स्वीकार करने लगता है तो यह नकारात्मक तत्व उसके माध्यम से कार्य करने लगते हैं। तब वे कई प्रकार के चमत्कार दिखातें हैं, जैसे उनके अन्दर से कंकुम का निकलना। ये लोग अत्यन्त प्रभावशाली हो उठते हैं और इस प्रकार से बातचीत करते हैं कि लोग इन पर मोहित हो जाते हैं। ये लोग इस प्रकार से बातें करते हैं मानो डेल्फी के दिव्य पुरुष सा कोई महान व्यक्ति बात कर रहा हो। सारा कुछ आसुरी प्रदर्शन सा बन जाता है। तो जब ये बाईं आज्ञा दाईं ओर को चली जाती है तो ये लोग बहुत बड़े गुरू–महागुरू बन बैठते हैं। आजकल जो भी कुछ आप देख रहे हैं, ऐसा सभी कुछ वे बन जाते हैं। वो महागुरू बन सकते हैं। ये सारे बाईं ओर के कृत्य करते हुए और इन पर नियंत्रण करते हुए, दाईं ओर से इनका उपयोग करते हुए वे वास्तव में यह स्थिति प्राप्त करते हैं। यह बहुत ही भंयकर स्थिति है। जब बाईं आज्ञा बहुत अधिक बढ़ जाती है तो व्यक्ति का स्वभाव अत्यन्त अहंकारपूर्ण हो सकता है। तब आप एकदम से उसका उपयोग करने लगते हैं और अत्यंत डींगबाज बन जाते हैं। इस प्रकार से आचरण करने वाले सहजयोग में भी हमने देखा है, जिन लोगों को दाईं आज्ञा थी, जो बाईं आज्ञा

की पकड़ से हो गई और वे दुर्व्यवहार करने लगे। ऐसी स्थिति में उन्हें सहजयोग में वापिस नहीं लाया जा सकता। वे सभी प्रकार के कार्य करते हैं, सभी प्रकार की चालाकियाँ करते हैं और इस प्रकार से लोगों को प्रभावित करते हैं, वे दिखावा करने का प्रयत्न करते हैं परन्तु उनके माध्यम से भूत बोल रहे होते हैं। तो यह अवस्था है जहाँ हम कहते हैं कि वे सहजयोग से बाहर हैं। हम उन्हें अन्दर नहीं ले सकते। तो ये एक बात है इससे बचना चाहिए। **किसी को यदि बाईं आज्ञा की पकड़ है तो कृपा करके इसे ठीक करें और हर समय स्वयं पर ही नाराज हों, हर समय। क्यों मुझमें ये क्रोध है ? क्यों मुझे क्रोध करना चाहिए ? हो सकता है इस अहं से किसी को चोट पहुँती हो। ऐसा व्यक्ति अत्यन्त अटपटा भी हो सकता है।** चोट खाया हुआ अहं गुब्बारे की तरह से फूल भी सकता है। गुब्बारे को आप बाहर से चोट मारें या अन्दर से वह फूलेगा ही। ऐसा व्यक्ति अत्यन्त अजीबोगरीब हो सकता है और बनावटी रूप से विनम्रता और आनन्द का दिखावा कर सकता है। तो इस प्रकार का व्यक्तित्व भी व्यक्ति में विकसित हो सकता है।

दाईं ओर की आज्ञा बहुत सारे कारणों से पकड़ सकती है, जैसे आपका जन्म, आपके माता–पिता या हो सकता है आपके माता–पिता ने अनावश्यक प्यार–दुलार दिया हो और आपमें यह भावना उत्पन्न कर दी हो जिससे आप अपना कोई अन्त ही नहीं समझते–हो सकता है आपकी तथाकथित पढ़ाई–लिखाई, हो सकता है आपकी तथाकथित सफलता या आपके माता–पिता का बहुत उच्च पद पर होना, जिससे यह दाईं आज्ञा आपमें

बढ़ जाती है और जब दाईं आज्ञा बढ़ती **है तो यह विकट हो जाती है। आप किसी भी चीज को स्पष्ट नहीं देख सकते। यह इतनी बेवकूफी की, मूर्खतापूर्ण स्थिति है कि आप मूर्खतापूर्ण कार्य किए ही चले जाते हैं और अपनी मूर्खता को तब तक नहीं देख पाते जब तक आप पूरी तरह से बरबाद नहीं हो जाते। तब आपको इसका पता चलता है –हाँ, यही सत्य है। मानव वास्तविकता की अपनी सूझबूझ** में इतना तुच्छ है – मैंने पाया है कि एक चेक काटकर देने से ही व्यक्ति को अहं हो जाता है, यहाँ तक की बैंक का कार्ड होने पर भी व्यक्ति को अहं हो जाता है। एक व्यक्ति लन्दन में मेरी कार चलाया करता था। जब भी वह कार में बैठता उसकी आज्ञा गुब्बारे की तरह से फूल जाती। मैंने पूछा क्या बात है ? क्यों उसकी आज्ञा इस प्रकार से बढ़ जाती है ? उसने मुझे बताया कि 'क्योंकि मैं मर्सिडीज़ कार चला रहा होता हूँ इसलिए मेरी आज्ञा पकड़ जाती है।' मैंने कहा, परन्तु यह तुम्हारी मर्सिडीज़ तो नहीं है, तुम तो मात्र इसे चला रहे हो। एक अन्य उदाहरण, एक महिला मुझसे मिलीं। मैंने देखा उसकी आज्ञा बहुत बढ़ी हुई है। मैं बहुत हैरान हुईं कि इस महिला को क्या समस्या है! मैंने पूछा कि ''आप क्या करती हैं।'' ''मैं गुड़िया बनाती हूँ।'' क्योंकि वह गुड़िया बना सकती है इसके कारण उसे अहं था। **परमात्मा ने यदि आपको कोई प्रतिभा दी है, कोई गुण दिया है तो परमात्मा के लिए कोई भला कार्य करके अपने प्रेम की अभिव्यक्ति करनी चाहिए। ये दर्शाने का प्रयत्न करना चाहिए कि हे परमात्मा! आपने मुझे ये प्रतिभा दी है, मुझे भी आपके लिए कुछ कार्य करने का अवसर दें। परन्तु ऐसा**

करने के स्थान पर लोग ये सोचते हैं मानो यह 'मेरा कार्य' हो। वो अत्यन्त गर्व महसूस करते हैं और दिखाना चाहते हैं कि वे महान–प्रतिभावान हैं या उच्च शिक्षा प्राप्त हैं, आदि–आदि। परमात्मा के लिए ये सब क्या है ? ज्ञान क्या है ? सारी 'अविद्या' है। तो इस अहं से मुक्ति पाने के लिए हमारे पास एक साधारण उपाय है, जिसे मोहम्मद साहब ने सुझाया था। यह बहुत अच्छा कार्य करता है। उपाय ये है कि जूता लेकर अहं से मुक्ति पाने के लिए प्रतिदिन अपने अहं को अच्छी तरह से जूते मारें। परन्तु हम तो हमेशा अन्य लोगों के अहं को ही देखते रहते हैं। अपने अहं को कभी नहीं देखते, कभी ये नहीं सोचते कि हममें भी कोई कमी है। **बस यही सोचते हैं कि अन्य व्यक्ति में कुछ कमी है। अहं की यह पहली निशानी है कि व्यक्ति अपने अहं को नहीं देखता। ये नहीं देखता कि मुझमें क्या कमी है ? ये नहीं देखता कि मेरा आचरण कैसा है और किस प्रकार मैं अन्य लोगों से व्यवहार करता हूँ। लोग आपके विषय में क्या सोचते हैं ?**

मैं अपने पिता का उदाहरण दूँगी। वे अत्यन्त अहंविहीन व्यक्ति थे। अत्यन्त प्रतिभाशाली और ज्ञानवान थे। आज तक मुझे उन जैसा कोई भी व्यक्ति नहीं मिला। वे अत्यन्त गहन थे। मान लो वह मेज़ पर खाना खा रहे होते और हम सब भी उनके साथ बैठे हुए होते थे। यदि खाने में नमक नहीं होता तो किसी को भी यह कहने की आज्ञा नहीं थी कि खाने में नमक नहीं है। जो भी हो यही खाना खाना पड़ेगा, बिना नमक के।

आपको बिना नमक का ही खाना है, बिना कुछ बोले। तब मेरी माँ कहती कि खाने में यदि नमक नहीं था तो आपने मुझे बताया क्यों नहीं ? चचेरे, ममेरे भाई बहनों के कारण हमारा परिवार बहुत बड़ा था। सोने के लिए हमारे पास बड़े–बड़े कमरे थे। लड़कियों के लिए, लड़कों के लिए, कुछ कम्बल हम मिलकर भी ओढ़ लिया करते थे। सारी रात हँसी मज़ाक, धमाचौकड़ी करते थे। कभी–कभी हमें पृथ्वी पर भी सोना पड़ता था। तो एक दिन मेरी बहन ने शिकायत की कि जब भी वह पृथ्वी पर सोती है तो उसके शरीर में दर्द होता है। उस पर पिताजी ने कहा ''तुम बाहर सोया करो''। दस दिन तक बाहर सोओगी तो ठीक हो जाओगी। अपने शरीर को दास बनाओ। वह स्वयं भी यही किया करते थे। कहा करते थे 'तुम्हें किसी चीज की माँग नहीं करनी चाहिए।' कभी कभी आप यदि किसी चीज की माँग करते हैं, जैसे मान लो कोई व्यक्ति कहता है, 'मुझे रात का खाना इस समय पर चाहिए' तो वह कहते, ''नहीं बेहतर होगा कि तुम व्रत कर लो। खाने में, कपड़ों में, सम्पत्ति में किसी भी प्रकार की दिलचस्पी लेने के लिए वह हमें मना कर देते थे। इस सारी सुख–सुविधाओं में तुम्हारी रुचि नहीं होनी चाहिए। **क्योंकि ये चीजें यदि आपके पास होंगी तो तुम्हें इनका अहं हो जाएगा और सुख–सुविधाओं के प्रति दिलचस्पी तो भौतिक पदार्थों का दासत्व देती हैं। भौतिक पदार्थ हर समय आपको दास बनाने में लगे रहते हैं। जब भी आप आराम की कामना करते हैं तो वास्तव में आप भौतिकता की दासता की कामना करते हैं और जब भौतिकता आपके सिर पर सवार हो जाती है**

जिससे आपमें अहं विकसित हो जाता है, क्योंकि एक बार फिर आप दास बन जाते हैं। दास बने व्यक्ति में अहं सबसे ज्यादा होता है। इस प्रकार से आप कहने लगते हैं कि, "मेरे पास ये चीज़ है, मेरे पास वह चीज है। इन चीजों को आप अपने साथ नहीं ले जा सकेंगे। सहजयोगी के लिए आवश्यक है कि वह अत्यन्त सादे और कठोर तरीके से जीवन–यापन कर सके। हर तरह के हालात में या स्थितियों में उसमें रहने की शक्ति होनी चाहिए। योगी का यही चिह्न है। योगी को यदि आरामदायक बिस्तर चाहिए, अच्छा खाना आदि चाहिए, खाने की यदि वह हर समय चिंता करता है, अपने बटुए और धन को यदि हर समय वह देखता है तो वह योगी नहीं है। इस सब चीज़ों से उसको कोई सरोकार नहीं होना चाहिए।

मैं कह रही हूँ कि सहजयोगियों के रूप में आपने स्वयं को इस प्रकार विकसित करना है कि आप सहजयोग में परिपक्व हो सकें। आपने सहजयोग में परिपक्व होना है ताकि सभी प्रकार के प्रलोभनों, सभी प्रकार की आदतों तथा सभी प्रकार की सामयिक माँगों से आप पूर्णतः मुक्त हो सकें। ऐसे व्यक्ति को योगी कहा जाता है। जिन लोगों को आपने पढ़ा है, उन्हें मैंने ये सब नहीं बताया था, इसका ज्ञान उन्होंने स्वयं प्राप्त किया। किसी प्रकार उन्होंने यह ज्ञान प्राप्त किया ? क्योंकि वे अपने प्रति और परमात्मा के प्रति पूर्णतः शुद्ध, शुद्ध, शुद्ध हो गए और उन्हें ये ज्ञान प्राप्त हुआ, तो यह पावनता आई। उदाहरण के रूप में, मार्कण्डेय एक स्थान पर रहते

थे, स्वयं को परमात्मा के प्रति समर्पित करते थे। अपने पिता के साथ अत्यन्त सादगीपूर्वक, अत्यन्त प्रसन्नता से वहाँ रहते थे। वे सर्वाधिक वैभवशाली व्यक्ति थे क्योंकि देवी माँ की कृपा का वह आनन्द लेते थे। भविष्य की सभी चीजों को उन्होंने पहले से ही देख लिया। बाल आयु में मर जाने का श्राप उन्हें था। उनके पिता ने उन्हें बताया कि तुम्हें मरना ही होगा क्योंकि भगवान शिव ने जब मुझे पुत्र का वरदान दिया तो साथ ही कह दिया था कि मैं तुम्हें पुत्र तो दूँगा परन्तु उसकी आयु बहुत छोटी होगी। मार्कण्डेय ने कहा, 'ठीक है, मैं इसका हल खोज लूँगा।' अतः उन्होंने देवी की तपस्या की। देवी ने उन्हें वरदान दिया, देवी के उन्हें साक्षात दर्शन हुए और इस प्रकार से ये स्थान – 'सप्तश्रृंगी' बना। सप्तश्रृंगी अर्थात् सात चक्र। यह आदि शक्ति का स्थान है। आज जब आप यह सब पढ़ रहें है तो आपको हैरानी होती है कि चौदह हजार वर्ष पूर्व वह ये सब कैसे जान पाए! कितने लोग इस सब चीजों के विषय में जानते हैं जो आपके सहजयोग से मिलती हैं, जो दर्शाती हैं कि आप क्या हैं ? किस प्रकार से संक्षिप्त रूप में उन्होंने ये सब लिखा ? क्योंकि वे स्वयं पूर्ण प्रतिबिम्बक (Reflector) बन गए थे। पूर्ण प्रतिबिम्बक ने ही विश्व को दर्शाया कि देवी क्या है ? **इसका महान श्रेय उन्हीं को जाता है। बिना किसी अहं के उन्होंने यह सब किया। व्यक्ति में यदि अहं या प्रतिअहं शेष हो तो वह प्रतिबिम्बित नहीं कर सकता। अहं इतनी भ्रामक अवस्था है कि व्यक्ति कहने लगता है कि मुझे ये पसन्द नहीं है। मैं ऐसा नहीं चाहता, ये मेरा नहीं है। "जब तक आप ऐसा करते रहते हैं तो जान**

लें कि आप अहं की अवस्था में हैं, आप योगी नहीं हैं, आप अहंग्रस्त व्यक्ति हैं।

अतः ये बात महत्वपूर्ण है कि आप स्वयं को इस प्रकार बनायें जिससे अहं और प्रतिअहं के बादल आपमें लुप्त हो जायें। देवी की पूजा से आपका हित होता है क्योंकि आप जब देवी की पूजा करते हैं, जोकि शक्ति हैं – वह कुण्डलिनी हैं, वे आपके चक्रों का विस्तार करती हैं, सुषुम्ना सुधरती है। आपकी यह नाड़ी विस्तृत होकर अधिक खुल जाती हैं परन्तु फिर भी धारण–क्षमता आपमें नहीं होती।

पुनः ये तो ऐसा हुआ जैसे घड़े में छेद हो, जितना भी पानी आप इसमें डालें, घड़े के बाहर चला जाएगा। यहाँ भी स्थिति ऐसी ही है।

आरम्भ में चाहे हम कहें कि पानी भरा हुआ है क्योंकि ये तेजी से आता है परन्तु कुछ समय पश्चात् घड़ा खाली हो जाएगा। कुण्डलिनी के बारे में भी ऐसा ही है, बिल्कुल ऐसा ही।

जो छिद्र हमारे अन्दर है यह अहं भी हो सकता है और प्रतिअहं भी। ये दो समस्याएं हैं जिनसे यदि आप बच सकें तो बचें। बस इतना ही। इतना कुछ कर लें। सर्वोत्तम तो यह होगा कि स्वयं को देखें , स्वयं को फटकारें और एक स्तर पर पहुँचकर स्वयं की सराहना करें, विशेष रूप से जब आप कोई अच्छा काम करें, उदारता का कार्य करें। इसी चीज की कमी है।

कई बार सहजयोगी सोच लेते हैं कि अब हम परमात्मा के साम्राज्य में पहुँच गए हैं, परन्तु यह आपका लक्ष्य नहीं है। मान लो कोई व्यक्ति सचिवालय में सफाई कर्मचारी का कार्य कर रहा है और वह सोचता है कि '' मैं प्रधानमंत्री बन गया हूँ'' तो क्या कहा जाए, उसकी क्या अवस्था है ? तो यहाँ भी ऐसा ही है। आप परमात्मा के साम्राज्य में पहुँच गये हैं परन्तु क्या आपने अपना लक्ष्य प्राप्त कर लिया है ? इसके लिए आपको किसी शिक्षा, किसी ज्ञान, किसी विशेष महानता की आवश्यकता नहीं है और न ही आपको किसी नाम, प्रसिद्धि, परिवार, जाति, वंश की आवश्यकता है, कुछ भी नहीं।

विनम्र भक्ति, ध्यान धारणा तथा उत्थान की शुद्ध इच्छा की आवश्यकता है, उत्थान की शुद्ध इच्छा की। यह इतनी सुन्दरता पूर्वक कार्य करेगी, इतनी सुन्दरता पूर्वक की आप आश्चर्य चकित हो जायेंगे।

हमें अपना लक्ष्य जान लेना चाहिए। सर्वप्रथम , हमनें क्या प्राप्त करना है। दूसरे, हमें यह जानना आवश्यक है कि लक्ष्य प्राप्ति के लिए सफलता प्रदायक गुण कौन सा हैं। हमें समर्पण करना होगा। यह बहुत आसान है, हमें समर्पण करना होगा।

लोग ध्यान करते हैं फोटोग्राफ देखते हैं। फोटोग्राफ को देखकर उन्हें महसूस करना चाहिए

मानो ये उनकी अपनी माँ का फोटो है। उन्हें अपने हृदय में बिठायें। फोटोग्राफ अवश्य रखें और कहें, "श्रीमाताजी मैं आपसे प्रेम करता हूँ, कृपा करके मेरे हृदय में आयें, इस प्रकार से उन्हें अपने हृदय में बिठायें।" हृदय में वांछित विवेक है, पूर्ण योग्यता है और हृदय से ही हर चीज़ का जन्म होता है। परन्तु हृदय को यदि आप बन्द कर लें तो मस्तिष्क निरंकुश होकर बाहर की ओर चला जाता है। हृदय में आत्मा का निवास है। यह सभी कुछ नियंत्रित करता है – परा अनुकम्पी, अनुकम्पी नाड़ी तन्त्र, आपकी पूर्ण विकास प्रणाली, आपका ज्ञान, सभी कुछ। सिर्फ यही नहीं, स्वयं को केवल सामूहिक अस्तित्व महसूस करते हैं, यह आपको प्रकाश प्रदान करता है जिसके माध्यम से आपको सच्चा ज्ञान प्राप्त होता है। अतः आत्मा को कार्यान्वित किया जाना चाहिए। तो पहली आवश्यकता ये है कि हृदय को विकसित करने का प्रयत्न करें। स्वयं देखें कि आपका हृदय कितना विशाल है। ठीक है, कितने लोगों को आपने क्षमा किया, किस प्रकार आप उनसे बातचीत करते हैं, अन्य लोगों के विषय में आप क्या सोचते हैं ? आपको उनकी चिन्ता है या नहीं ? उदाहरण के रूप में यदि मैं किसी निर्धन व्यक्ति को देख लूं तो मेरे पूरे अस्तित्व का मंथन होने लगता है। मुझे लगता है कि इनके लिए कुछ किया जाना चाहिए। उनकी निर्धनता मेरे से सहन नहीं होती। जैसे यहाँ काम करने वाले मजदूरों को यहाँ से चले जाने के लिए कह दिया गया,

क्योंकि इसके विषय में कुछ लोगों को एतराज़ था। अतः हमने उन सबको बाहर कर दिया। परन्तु उन्होंने तो अपनी झोपड़ियाँ भी नहीं बनाई थीं। पूरी रात वे बेचारे गरीब बाहर बैठे रहे। अगले दिन मैं कुछ भी न खा सकी। मुझे इतना बुरा लग रहा था। मैंने उन्हें सब कुछ दिया। कहा, यहाँ बैठो, सबसे कहा कि इनकी हर आवश्यकता को पूरा करो, इनके स्वास्थ्य की देखभाल करो, परन्तु फिर भी कुछ लोग बीमार पड़ गए और मैंने उनका इलाज किया क्योंकि पूरी करुणा हृदय में तूफान खड़ा कर देती है। एक बहुत बड़ा तूफान जिसे व्यक्ति को देखना होता है। गरीबी के विषय में आप क्या सोचते हैं ? क्या आप विद्यमान गरीबी के विषय में सोचते हैं ? कष्ट उठाने वाले लोगों के बारे में आप क्या सोचते हैं ? जिन लोगों को पीटा गया, जिन्हें धोखा दिया गया, जिन्हें कष्ट दिया गया उनके विषय में आप क्या सोचते हैं ?

सहजयोग किसी एक व्यक्ति के लिए नहीं है। यह केवल आपके लिए नहीं है, यह सहजयोगियों के किसी एक समूह के लिए नहीं है, यह पूरे विश्व के लिए है। परमात्मा के प्रेम एवं करुणा के प्रकाश को सर्वत्र फैलाना है। अतः इससे आगे की अवस्था आज्ञा से ऊपर उठना है। जब व्यक्ति सोचता है कि मैं बहुत प्रसन्न हूँ और यह चीज़ प्राप्त हो जानी चाहिए, तब उसे चाहिए कि उसकी ओर देखे जिसे कुछ भी नहीं मिला है। जब आप ये सोचें कि आप बहुत महान हैं तब अपने से अधिक महान

किसी व्यक्ति को देखें। इन सब चीजों पर जब आप अपना चित्त डालेंगे तो यह बात समझने लगेंगे कि हे परमात्मा! कितना बड़ा आर्शीवाद है! परमात्मा ने मुझे कितना बड़ा आशीर्वाद दिया है!

सर्वप्रथम मुझे, आत्म–साक्षात्कार दिया है। आत्म–साक्षात्कार देने के लिए आपको कोटि शत् धन्यवाद। कृतज्ञ होना सर्वोत्तम है और जब आपको लगे कि आपमें कृतज्ञता भाव है तो सोचें कि मैं अन्य लोगों को आत्म–साक्षात्कार क्यों नहीं देता ? परन्तु हम तो अत्यन्त क्रूर, कभी अत्यन्त अक्खड, कभी अन्य लोगों के प्रति अत्यन्त द्वेषमय होते हैं। परन्तु अब यह सब समाप्त हो जाएगा। जो भी कुछ आपको कहना हो, ईमानदारी पूर्वक कहें।

आपके दो शत्रु हैं। पहला आप स्वयं अपने शत्रु हैं और दूसरा अज्ञान। इन दो शत्रुओं पर आपने विजय प्राप्त करनी है। इन शत्रुओं पर यदि आप विजय प्राप्त कर लें तो कोई आपको कष्ट नहीं दे सकता। मान लो कोई व्यक्ति कष्टकर है या कहें कि आपको सताता है तो आप उसे कष्टकर बने रहने दें। वह स्वयं नर्क में जा रहा है आप नहीं। यदि कष्ट दे रहा है तो ठीक है। तो उसे अपना कार्य करने दें। किसके मन में दुर्भावना है ? इस बात की चिन्ता आप क्यों करें। आप कुछ भी नहीं कर रहे हैं। इस पर आपको प्रसन्नता होनी चाहिए। इसके विपरीत कोई यदि कष्ट दे रहा है तो उसको

देखें – "ये व्यक्ति कष्ट दे रहा है, इसके पास धन है, इसके पास सब कुछ है परन्तु मुझे कष्ट दिये जा रहा है। मेरे पास यह सब नहीं है।" आपके पास आपका आत्म–साक्षात्कार है, उसके पास यह उपलब्ध नहीं है।

हमारे लिए यह संतुष्टि एवं उल्लास प्राप्त करने का बहुत बड़ा स्रोत है कि हम आत्म–साक्षात्कारी हैं। आइए, इसमें हम पूर्णतः स्थापित हो जायें। हमें अलंकृत होना है। हमें सिंहासनारूढ़ होना है और हमें सम्राट बनना है। मैंने यही इच्छा की है। अतः भिखारियों को नहीं लिया जा सकता। किसी भिखारी को यदि आप राजा बना दें तब भी वह भिखारियों वाली हरकतें करता रहेगा। अतः यह महान व्यक्तित्व आना ही चाहिए – एक प्रकार की गरिमा, शान्ति, एक विशेष प्रकार का व्यक्तित्व जो ये दर्शाए कि आप सहजयोगी हैं।

जैसा मैंने कहा कि केवल दो शत्रु हैं जिनसे आपने युद्ध करना है। आपको इस बात का ज्ञान होना चाहिए कि आपने आत्म–साक्षात्कार प्राप्त कर लिया है और इसी कारण आपको पूजायें प्राप्त हैं। पूजा के समय आप अपने को मेरे प्रति समर्पित कर दें क्योंकि यदि आप समर्पित नहीं होंगे तो आपका मन इधर–उधर भटकता रहेगा। यह तो वैसा ही होगा जैसे चलते हुए पंखे पर आप यदि कुछ डालना चाहें तो वह स्वीकार नहीं करता, उसे दूर फेंक देता है। एक प्रकार से आप भी वैसे ही हैं।

दूसरी बात ये है कि पूजा समर्पण है। ये भक्ति है, हृदय की भावना है, हृदय को खोलें। उस समय हृदय को खोलकर यह सोचें कि मैं पूजा कर रहा हूँ। लेकिन समस्या ये है कि किसी अहंकारी व्यक्ति से यदि यह सब बताया जाए तो उसको चोट पहुँचती है। यह सबसे बुरी बात है। उन्हें यह नहीं समझ आता कि यह बात उनके हित के लिए है कि वे अपना हृदय खोलें, उन्हें बहुत अधिक प्राप्त करना है। हृदय यदि संकीर्ण है तो इसमें आप कितना प्रेम भर सकेंगे ? जैसे इस समय प्रेम प्रसारित हो रहा है, प्रेम बह रहा है, परन्तु ऐसे समय पर यदि आप किसी अन्य चीज़ पर अपना मस्तिष्क लगा कर बैठे हों। अतः समर्पण की बात ये है कि आपका चित्त पूरी तरह से मुझ पर होना चाहिए। लोगों को मैंने पूजा में सोते हुए देखा है। बहुत से लोग सोते हैं। ये दर्शाता है कि वे बाईं ओर को हैं और उनमें भूत आदि होते हैं, इसलिए वे सो जाते हैं। मैं जब उनसे बात कर रही होती हूँ और वे सो जाते हैं। ये सब बातें समझ लेना आपके लिए आवश्यक है कि आप ऐसा क्यों कर रहे हैं ? इनसे मुक्ति पाने का प्रयत्न करें और स्वयं को सुधारें, सावधानी पूर्वक इसे (चैतन्य) प्राप्त करें, अधिक से अधिक मात्रा में चैतन्य प्राप्त करें। पूजा का यही उद्देश्य होता है। यहाँ आपने नौ पूजाएं की हैं, इन नौ पूजाओं में क्या हममें कुछ सुधार हुआ ? क्या हमें कुछ प्राप्त हुआ ? क्या हमारे प्रेम, आनन्द, सूझ–बूझ और संतोष में कोई वृद्धि हुई ?

आज अन्तिम दिन है अतः आपने यह सब सोचना है। कल आनन्दोत्सव का दिन है क्योंकि जो हमने

प्राप्त किया है उसका आनन्द उठाना है। तो आज जाकर अपनी पूरी तस्वीर खींचे – इन नौ दिनों में मुझे क्या प्राप्त हुआ, मुझे क्या मिला ? आइए, देखें कि क्या मुझे यह सब प्राप्त हुआ। इन सारी चीजों को अपने अन्दर झाँककर देखें और फिर इस बात का आनन्द लें कि आपको यह सब प्राप्त हो गया है। यही विजय है। कल 'विजय दिवस' है अर्थात् आपने स्वयं पर और अपनी अज्ञानता पर विजय प्राप्त कर ली है, आपने स्वयं को जीत लिया है और अज्ञानान्धकार को जीत लिया है। कल के लिए यही संदेश है।

परमात्मा आपको धन्य करें।

सर्वाधिकार सुरक्षित

बिना पूर्व आज्ञा के इस पुस्तक के किसी भी भाग की प्रतिलिपि या किसी भी रूप में प्रसारण वर्जित है। कोई भी व्यक्ति अनधिकृत रूप से यदि इसका प्रकाशन करता है तो उस पर हानिपूर्ति का दावा किया जाएगा।